महाबली इन्द्र

किशोर-उपन्यास-माला क्रम-५५

लेखक - सुशीलकुमार
चित्रकार - हरिपाल त्यागी

महाबली इन्द्र

आज से हजारों वर्ष पहले—तब न आज की तरह सभ्यता थी, न देश था, न सीमाएं। मनुष्य अलग-अलग दल बनाकर यहां-वहां विचरता रहता। हर दल एक पूरा परिवार था। सब श्रम करते और जो कुछ जुटता, सभी बराबर बांट लेते। देव जाति के ऐसे ही एक दल का नेता था महाबली इन्द्र—संसार के इतिहास का सम्भवतः पहला व्यक्ति, जिसने शासन की नई व्यवस्था स्थापित की। पुराणों में उसके सम्बन्ध में अनेक चमत्कारभरी कथाएं हैं, पर वैदिक साहित्य में वह एक महाबली योद्धा के रूप में सामने आता है। उसने अनेक बलवान शत्रुओं का वध करके तथा अनेक व्यक्तियों से मित्रता करके देव जाति के लिए धरती और वैभव जुटाया था। इस उपन्यास में प्रामाणिक तथ्यों के आधार पर देवासुर-संग्राम की रोचक कथा प्रस्तुत करने की चेष्टा की गई है।

आज से हजारों वर्ष पहले—तब न आज की तरह सभ्यता थी, न देश था, न सीमाएं। मनुष्य अलग-अलग दल बनाकर यहां-वहां विचरता रहता। हर दल एक पूरा परिवार था। सब श्रम करते और जो कुछ जुटता, सभी बराबर बांट लेते। देव जाति के ऐसे ही एक दल का नेता था महाबली इन्द्र—संसार के इतिहास का सम्भवतः पहला व्यक्ति, जिसने शासन की नई व्यवस्था स्थापित की। पुराणों में उसके सम्बन्ध में अनेक चमत्कारभरी कथाएं हैं, पर वैदिक साहित्य में वह एक महाबली योद्धा के रूप में सामने आता है। उसने अनेक बलवान शत्रुओं का वध करके तथा अनेक व्यक्तियों से मित्रता करके देव जाति के लिए धरती और वैभव जुटाया था। इस उपन्यास में प्रामाणिक तथ्यों के आधार पर देवासुर-संग्राम की रोचक कथा प्रस्तुत करने की चेष्टा की गई है।

किशोर-उपन्यास-माला

(सचित्र, सरस तथा स-उद्देश्य)

हम इस लोकप्रिय उपन्यास माला के अन्तर्गत एक-दो या चार-छः नहीं, पचास से भी ज्यादा रचनाएं प्रकाशित कर चुके हैं, और करते जा रहे हैं। ऐतिहासिक नायक-नायिकाएं, 'अरब की रातों' के राजा-रानी, राष्ट्र और विभिन्न धर्मों के नायक, शिकार की रोमांचकारी गाथाएं, प्रख्यात साहित्यकारों का जीवन और शेक्सपियर के नाटकों की कथाएं—कोई भी विषय ऐसा नहीं, जिसकी जानकारी इन रोचक उपन्यासों के माध्यम से न दी गई हो। राष्ट्र के होनहार नागरिकों का निर्माण— यही है हमारा उद्देश्य।

हमारे यहां से प्रकाशित रोचक उपन्यास

वीर रस से परिपूर्ण

भीष्म
श्री कृष्ण
तांत्या टोपे
बाजीराव पेशवा
सम्राट शिलादित्य
चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य
गढ़मंडल की रानी
गुरु गोविन्द सिंह
आचार्य चाणक्य
हल्दी घाटी
दुर्गादास
महाबली इन्द्र
कर्ण
अर्जुन
जय भवानी
वीरांगना चेन्नम्मा
खूब लड़ी मर्दानी
चित्तौड़गढ़ की रानी
महाबली छत्रसाल
वीर कुंवर सिंह
चन्द्रगुप्त मौर्य
वीर कुणाल
उदयन

अन्य महापुरुषों पर आधारित

महाकवि कालिदास		गुदड़ी का लाल : लालबहादुर
ऋषि का शाप		मदुरा की मीनाक्षी
गुरु नानक देव		देवता हार गए
शान्ति-दूत नेहरू		सम्राट अशोक
गुरु अंगद देव		गुरु अमरदास
गौतम बुद्ध	बापू	रवि बाबू

शेक्सपियर के नाटकों पर आधारित

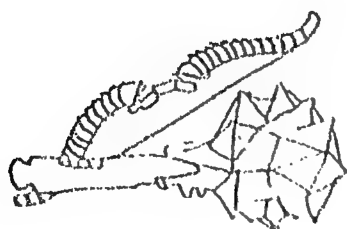
तूफान	हैमलेट	भूल पर भूल
मैकबेथ	राजा लियर	रोमियो जूलियट
जूलियस सीजर	राई से पहाड़	वेनिस का सौदागर

शिकार एवं ज्ञान-विज्ञान पर आधारित

रूपा और लल्ली	हाथी का शिकार	मगरमच्छ का शिकार
बाघ का शिकार	ह्वेल का शिकार	दैत्याकार पक्षी का शिकार
अरब के मसखरे	धूप	अलीबाबा : चालीस चोर



उमेश प्रकाशन
१ नव मार्केट नई सड़क दिल्ली ६



९

○○○

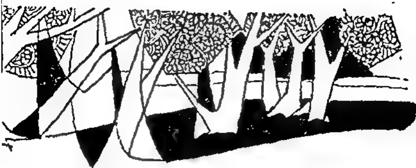
दिन ढल गया था। सूर्यास्त की आभा नदी के वक्ष पर धीरे-धीरे हिल रही थी। रेत के कणों से टकराकर सूरज की लाल चमकीली किरणें इधर-उधर बिखर जाती थीं। उत्तर की ओर थोड़ी ही दूर पर एक छोटा-सा गांव दिखाई पड़ रहा था। इस समय यहां से केवल लाली में नहाए छप्पर ही देखे जा सकते थे। उन पर धुएं की एक तह बिना किसी आधार के लटकी जान पड़ती थी, जिसका रंग कहीं गाढा लाल था, कहीं नीला।

नदी के एकदम किनारे एक बड़ा-सा पेड़ था, जिसकी कुछ डालें पानी पर दूर तक फैली हुई थीं। टहनियां हवा में झूल-झूलकर पानी को छू लेती थीं।

चारों ओर शान्ति छाई थी—

हां, एकाध बार घोंसले में लौटते सहचर को देख गत में किसी पक्षी का कलरव गूंज उठता, फिर -





अचानक सन्नाटे को चीरकर कहीं से तीखी शंख-ध्वनि गूंज उठी। एक बार, दो बार, फिर कई बार। साथ ही घोड़े की टापें उभरीं और थोड़ी ही देर में पेड़ों के झुरमुट के बीच की पगडंडी से घोड़े की नंगी पीठ पर सवार एक युवक निकल आया।

सतर्क दृष्टि से इधर-उधर देखता वह पेड़ के नीचे आ खड़ा हुआ। उसके लम्बे और सुनहरे बाल हवा में लहरा रहे थे। ऊंचा माथा, बड़ी-बड़ी सुन्दर पीली आंखें, पुतलियों का रंग हरा था, पर उनसे जैसे तेज की धारा झरी पड़ती थी। लम्बी और ऊंची नाक, सुन्दर कटावदार होंठ। अभी उसकी वय अठारह-उन्नीस से अधिक नहीं लगती थी। दाढ़ी-मूछों की जगह कुछ सुनहरे रंग के बिखरे-बिखरे-से बाल थे, जिनसे उसके सुकुमार चेहरे पर गम्भीरता की छाप उभर आई थी।

नीचे उतरकर उसने घोड़े की पीठ थपथपाई, फिर कुछ आगे बढ़कर बार-बार पूरब की ओर फैले घने जंगली प्रदेश की ओर देखने लगा। लेकिन कहीं कुछ भी नहीं दिखाई पड़ा। उसने फिर शंख होंठों से लगाया और उसकी रुक-रुककर

होने वाली तीखी ध्वनि फिर से वातावरण में गूंज उठी।

बड़ी देर तक वह उत्तर सुनने के लिए कान लगाए खड़ा रहा, पर व्यर्थ। चिन्ता से सिर झटककर उसने दोनों हाथों को अगल-बगल तानकर जमुहाई ली। उसके ऊंचे कन्धे और भी चौड़े लगने लगे, साथ ही बांहों की पुष्ट मछलियां उभर आईं। वक्ष पर पड़ी बाघ की खाल भी जैसे कुछ और तन उठी।

शंख रेत पर रखकर वह पानी में उतर पड़ा। हाथ-मुंह धोकर वह अंजुलियां भर-भर पानी पीने लगा। ठीक उसी समय जान पड़ा कि किसी की पदचाप सुनाई पड़ रही है। उसने कान लगाकर सुनने की चेष्टा की, फिर जल्दी-जल्दी पानी से बाहर निकलकर घोड़े के पास आ खड़ा हुआ। रेत पर पड़ा शंख वैसे ही पड़ा रहा। उसने पेड़ के सहारे रखा हुआ लम्बा और मजबूत धनुष उठा लिया। पठारी क्षेत्र में अपने हाथों से उसने एक हरिण मारा था। धनुष उसी की लम्बी और चिकनी सींगों से बना था। डोर की जगह आंत लगी थी।

धनुष उठाकर उसने धरती पर टिकाया और पूरी शक्ति लगाकर प्रत्यंचा चढ़ा दी। उसके गोरे चेहरे पर लाली छा गई। आहट के साथ-साथ कुछ लोगों के बोलने की भी आवाज सुनाई पड़ने लगी। एक हाथ में धनुष और दूसरे में बाण लेकर वह ध्यान से सुनने लगा—नहीं, शत्रु नहीं, मित्र हैं।

उत्सुक होकर वह कई पग आगे बढ़ गया। थोड़ी ही देर बाद घने झाड़ों की ओट से उसी की तरह गोरे और लम्बे-चौड़े आठ-दस युवक बाहर निकल आए। उनके साथ-साथ उनकी अपेक्षा कुछ मटमैले उजले रंग का एक प्रौढ़ व्यक्ति था, जिसे वे लोग कभी धक्का दे देते थे और कभी ठोकर मारकर

आगे बढ़ाते थे। वह गिरता-पड़ता, चुपचाप बढ़ा आ रहा था।

बाण कंधे से लटकते तूणीर में डालकर इन्द्र ध्यान से उस व्यक्ति की ओर देखने लगा और धीरे से बड़बड़ाया, 'असुर!' उसकी भौंहों पर बल पड़ गए, आंखें चमक उठीं।

पास पहुंचकर एक युवक ने असुर की पीठ में पत्थर के बरछे की नोक चुभा दी।

पीड़ा से वह चीख पड़ा। सभी ठहाका लगाकर हंस पड़े। एक ने आगे बढ़कर असुर की गर्दन पर घूसा मारा; वह नीचे गिरकर बिलबिला उठा।

"इन्द्र, तेरी जय हो! हम अग्नि, मरुत्, अश्विनीकुमार, मनु आदि देवगण तुझे प्रणाम करते हैं। तू बलशाली है।"

इन्द्र ने दायां हाथ उठाकर उन्हें अभयदान दिया। साथ ही प्रश्नभरी दृष्टि से असुर की ओर देखने लगा।

अग्नि ने आगे बढ़कर कहा, "यह असुरों का सेवक दिमि है। वहां, उस ओर नदी पार करके हम देवों की सीमा में घुस आया था। चोर है, दस्यु!"

इन्द्र की आंखें जैसे भक् से जल उठीं, बोला, "तू?"

असुर ने जोर से सिर और हाथ हिलाकर 'ना-ना' किया, "मैं चोर नहीं हूं। मैंने कुछ नहीं चुराया है।"

अश्विनीकुमारों में से एक ने बढ़कर कहा, "नहीं चुराया तूने? खेल ऋषि का अन्न कहां गया?" उसने मुड़कर इन्द्र से कहा, "पिता देव मार्तण्ड ने खेल ऋषि को यज्ञ में बंटा अन्न दिया था। उसे कुटिया में रखकर ऋषि सोम घोंटने लगा। लौटने पर देखा, तो अन्न का एक दाना भी नहीं था। हम उधर पहुंच गए थे, सुनते ही खोजने लगे। उस समय तट पर यही मिला। असुर है—चोर और कौन हो

"अन्न इसने क्या कर डाला ?" इन्द्र ने पूछा।

अग्नि ने तुरन्त कहा, "हमें देखकर नदी में फेंक दिया होगा।"

इन्द्र को जैसे बहाना मिल गया, बोला, "हां, ऐसा ही होगा। इसे ले चलो, सुरनायक द्यौस दण्ड देगा।"

वहां खड़े सभी युवकों के चेहरे उदास हो गए। अग्नि बोला, "तेरा पिता क्या दण्ड देगा ? तू आज्ञा दे, दण्ड हम देंगे।"

इन्द्र का चेहरा मलिन हो गया। संभलकर बोला, "नहीं, पिता देव द्यौस राजा है। दण्ड वही देगा। वही दे सकता है।"

सब चुप ही रहे। थोड़ी देर बाद इन्द्र ने ही फिर पूछा, "और ?"

सारे युवक सकुचा गए। सहमे हुए स्वर में अश्विनी-कुमार दस्र ने बताया, "इस दस्यु को पकड़कर हमने तो सोचा था, इन्द्र बहुत प्रसन्न होगा..."

"और प्रसन्न होकर इन्द्र असुर का मांस खा लेगा।" इन्द्र क्रोध से बोला। उसकी गरदन की नसें तन गई। युवकों ने भय से आंखें झुका लीं।

"अश्विनीकुमार नासत्य, मैंने तुझसे क्या कहा था ?"

नासत्य ने डरते-डरते धीरे से कहा, "कृष्ण मृग लाने के लिए।"

"कहां है ?"

नासत्य सिर झुकाए खड़ा रहा। इन्द्र ने क्रोध से अपनी ही जांघ पर घूंसा मारते हुए कहा, "नहीं लाया ?" फिर दायीं भुजा आकाश में तानकर बोला, "मैं इन्द्र, दोनों अश्विनी-कुमारों को वंचित करता हूं। आज से इन्हें यज्ञ में देवों का

भाग नहीं मिलेगा।"

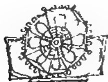
दोनों अश्विनीकुमार हाथ बांधकर उसके पैरों पर गिर पड़े, लेकिन इन्द्र ने उपेक्षा कर दी और मुड़कर बोला, "अग्नि! उधर, वृक्ष के पास मेरा मारा हुआ कृष्ण मृग पड़ा है, उठवा ला।"

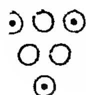
वह लपककर एक ही छलांग में घोड़े की नंगी पीठ पर बैठ गया और पलक झपकते आंखों से ओझल हो गया। अश्विनीकुमारों ने भय से आंखें फाड़कर अपने साथियों की ओर देखा, पर उनमें से कोई कुछ भी नहीं बोला। उनसे आंखें मिलाए बिना सिर झुकाकर सब इन्द्र के बताए हुए वृक्ष की ओर बढ़ चले।

"अग्नि, हमें नहीं ले चलोगे?" नासत्य ने गिड़गिड़ाकर पूछा।

अग्नि ने ठमककर धीरे से कहा 'इन्द्र जाने।' और वह भी मुड़कर साथियों के पीछे-पीछे चला गया।

दोनों अश्विनीकुमार अपमान से काले पड़ गए थे। वह चुपचाप खड़े, उन्हें जाते देखते रहे।





२

साँझ को इन्द्र के गांव में बड़ी हलचल मच गई। रोज ही इस वेला पूरा उत्सव-सा होता था। यज्ञशाला में गांव का हर व्यक्ति आ जुटता। दिनभर में जो भी कमाई होती थी, सब उसे लाकर यज्ञशाला में रख देते थे। फिर हवनकुण्ड में अग्नि देवता का आवाहन किया जाता। चारों ओर प्रजा बैठती और बीच में गणपति बैठता था। उसके निकट ही पुरोहित बैठता, जिसे ब्राह्मणस्पति भी कहते थे।

आज से कई हजार वर्ष पहले आर्य जाति की ही सबसे प्राचीन शाखाओं में से एक शाखा 'देव' अथवा 'असुर' कही जाती थी। इस गोत्र की माता थी अदिति। बहुत पहले गण-गोत्रों का नाम माता के नाम पर ही होता था। गण की सबसे योग्य और श्रेष्ठ स्त्री ही माता चुनी जाती थी; और गण का हर व्यक्ति उसका पुत्र माना जाता था। फिर यह परम्परा बन जाती थी कि जो भी स्त्री माता चुनी जाती, उसका

नाम वही हो जाता, जो पहली माता का था। अदिति के नाम पर देवों के समूचे गण का नाम आदित्य था। उनमें सूर्य अथवा मित्र, वरुण आदि बारह आदित्य प्रसिद्ध हुए हैं।

आदित्यों की संख्या बहुत बढ़ गई थी। कुछ लोग अब भी दूर पश्चिम-उत्तर में अपनी मातृभूमि में ही रहते थे, पर वहां आहार, जल तथा अन्य सुविधाओं का अभाव हो जाने पर बाकी लोगों को दूसरे निवास-स्थान की खोज में निकलना पड़ा।

वर्षों तक राह में अनेक जातियों और गणों से लड़कर आदित्यों को अपने लिए जगह बनानी पड़ी। कभी माता दिति के पुत्र दैत्यों तथा माता दनु के पुत्र दानवों से युद्ध होता, और कभी विनता के पुत्र वैनतेयों अथवा गरुड़ों या माता कद्रू के काद्रवेयों अथवा नागों से। कहीं वे [illegible] को जला दिया, या उन लोगों [illegible] कार कर लिया और कहीं [illegible] कर या फिर से [illegible] होने के [illegible] आगे बढ़ते गए।

इस बीच धरती [illegible] समूहों का आपस में भी कई बार [illegible] वे भी नए गणों में बंट जाते।

दो प्रमुख आदित्यगणों—मित्र और वरुण—[illegible] में बड़ा मोह था। दोनों ने अपना [illegible] [illegible] था। किन्तु, यह स्नेह भी बहुत दिन तक न [illegible]। [illegible] उनमें भी मनमुटाव हो गया था। छोटे-मोटे [illegible] रहे। [illegible] की प्रजा [illegible] से [illegible] से मो- [illegible] [illegible]। [illegible], [illegible], [illegible] तथा [illegible] था। [illegible] के [illegible] [illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] का था। उसके ग्राम में बलशाली और विचारवान लोगों की कमी न थी। वैसे तो गण का हर व्यक्ति कुछ न कुछ कमाता ही था—बालक, वृद्ध और रोगी या पंगु व्यक्तियों को छोड़कर सभी को काम करना पड़ता।

धीरे-धीरे उन लोगों को 'ज्ञान' का आभास हुआ। लोग वृद्धों का आदर तो करते ही थे, बुद्धिमानों का भी आदर होने लगा। जो लोग सोच-समझकर संकट के समय गणनायक को परामर्श देते थे या तरह-तरह के दुख-बाधा से बचने का उपाय सुझाते थे, उन्हें भी शारीरिक मेहनत करने से छुटकारा दे दिया गया था। बहुत पहले अंगिरा ऋषि को ऐसी ही छूट मिली थी। इसी अंगिरा ने सबसे पहले अग्नि को खोज निकाला था। दो काठों या पत्थरों को आपस में रगड़कर आग पैदा करने की विद्या उसी ने खोजी थी।

देवों और असुरों के परस्पर झगड़े के बाद बुद्धि के आधार पर अपनी जीविका चलाने वाले भी बंट गए थे। अंगिरा के शिष्य आचार्य शुक्र असुरों के पुरोहित बन गए थे और अंगिरा के पुत्र आचार्य बृहस्पति देवों के। इन लोगों का एक विशेष

काम हो गया था—यज्ञ कराना।

समूचे गण को ही सामूहिक रूप से ब्रह्म कहते थे। ब्रह्म के सामने गण के हर व्यक्ति की कमाई रखकर पुरोहित देवताओं की उपासना कराता था। उद्गाता स्तुति गाते थे। यज्ञकुण्ड में अग्नि को हवि दी जाती थी। गण की सारी कमाई में से थोड़ा-थोड़ा भाग निकालकर पुरोहित देवताओं के नाम पर अलग रख देता। उनके देवताओं के नाम थे उषा, सूर्य, अग्नि, सोम, आकाश, पृथ्वी आदि। उन दिनों [illegible] जीवन चलाने में जिस चीज का भी सहारा मिलता, वे [illegible] की पूजा करने लगते थे। कभी-कभी ऐसी-ऐसी शक्तियों की भी पूजा होने लगती थी, जिनसे वे डरते थे या [illegible] में कुछ समझ नहीं पाते थे।

इन्द्र के गण का नायक इन्द्र का [illegible] था। उसे राजन् अथवा राजा भी कहते थे। [illegible] शक्तिशाली व्यक्ति ही राजा चुना जाता था [illegible] सम्राट् न वह गण के ऊपर शासन करता [illegible] गण की रक्षा करता था। वह [illegible] निरंकुश नहीं था।

यज्ञशाला में देवों की [illegible] की तरह प्रसन्नता नहीं थी [illegible] जोर से बातें कर रहे थे [illegible] ठहाके नहीं सुनाई पड़ते थे [illegible] भी तना-तना-सा था। उसके पास [illegible] पुरोहित बृहस्पति आंखें मूंदे पता नहीं [illegible]

"गणपति की जय हो!" [illegible]

सब की आंखें उस ओर उठ गई [illegible]

समय की सब से सुन्दर और [illegible]

क्रोध से बिफर उठी, 'तू राजा है। तेरे होते क्या मुझे ही बताना पड़ेगा कि दोनों अश्विनीकुमार कहां हैं !"

गणपति चिन्ता में पड़ गया। अश्विनी कभी इस तरह नहीं बोलती थी। हुआ क्या ? कुछ समझ में नहीं आता। राजा ने बृहस्पति से पूछा, "आंगिरस, तू जानता है, दोनों अश्विनीकुमार कहां हैं ?"

बृहस्पति ने आंखें खोल दीं और एक बार पूरे मण्डप पर दृष्टि डालकर जैसे किसी को खोजता रहा, फिर गम्भीर स्वर में बोला, "इन्द्र के पास होंगे।"

उसका कठोर स्वर सुनकर गणपति और भी उलझन में पड़ गया, बोला, "इन्द्र कहां है ?"

"यज्ञशाला के द्वार पर होगा।"

"वहां क्यों है ? अब तक अपना भाग लेने यज्ञमण्डप में क्यों नहीं आया ?"

पल भर चुप रहकर बृहस्पति अपनी चमकीली आंखों से अश्विनी की ओर देखता रहा, फिर भारी स्वर में बोला, "आज इन्द्र ने क्रोध में आकर दस्र और नासत्य को यज्ञ में भाग लेने से वंचित कर दिया है। उन्हें यज्ञमण्डप में आने से रोकने के लिए ही वह बाहर खड़ा होगा।"

गणपति का चेहरा क्रोध से तमतमा उठा। फिर भी अपने को संभालकर बोला, "तू जानता है, इन्द्र ने अश्विनीपुत्रों को इतना भयंकर दण्ड क्यों दिया ?"

"अग्नि जानता है।" बृहस्पति ने मण्डप में पूर्व और दक्षिण के कोने में सतर्क खड़े अग्नि की ओर संकेत किया।

राजा ने उस पर दृष्टि डाली। अग्नि सिर झुकाकर धीरे-धीरे पास आ खड़ा हुआ।

पर राजा ने उससे कुछ नहीं पूछा। एकाएक कोपकर

बोला, "पर ऐसा हुआ क्यों ?"

बृहस्पति ने कहा, "इन्द्र प्रजा है, अश्विनीकुमार भी प्रजा हैं। प्रजा प्रजा को दण्ड नहीं दे सकती।"

'राजा न्याय करे !" अश्विनी वहीं खड़े-खड़े चिल्लाकर बोली, "ब्रह्म आज्ञा दे, राजा न्याय करे।"

"हां, राजा न्याय करे।"

राजा चिन्तित होकर बृहस्पति की ओर देखने लगा। उसे कोई रास्ता नहीं सूझ रहा था।

पर बृहस्पति ने भी प्रजा के स्वर में स्वर मिलाकर कहा, "तुझे न्याय करना ही होगा, राजा ! प्रजा पर अत्याचार होगा तो तू असुर कहा जाएगा।"

राजा ने सिर झुका लिया। कुछ देर सोचता रहा, फिर बोला, "अच्छा, मैं न्याय करूंगा, पर पहले इन्द्र से पूछ लूं। यज्ञ का समय निकला जा रहा है। आंगिरस, तू देवताओं की बलि देकर पहले भाग बांट दे।"

अश्विनी चिल्लाई, "और मेरे बेटे क्या खाएंगे ? उनका भाग कौन देगा ?"

राजा के माथे पर सिकुड़नें आईं। उसे लगा कि इन्द्र के कारण सभी उसका अपमान कर रहे हैं। बृहस्पति भी जैसे होंठों में ही हंस रहा है। वह धीरे से बोला, "तेरे बेटे भूखों नहीं मरेंगे। आंगिरस..."

बृहस्पति यज्ञ कराने लगा। यज्ञमण्डप में देवों के मृदु-गम्भीर स्वर गूंज उठे, उद्गाता मन्त्र गा रहे थे :

"प्रजारक्षक और लोकप्रिय अग्नि को हम पुकारते हैं। हे अग्नि, आओ, हमारे यज्ञ में बैठो..."

"हे देवदूत, हमारे लिए तुम देवों को यहां ले आओ, और हमारा हव्य देवों तक ले जाओ..."

"हे अग्नि, तुम घी देकर बुलाए गए हो, तुम प्रकाशमान हो, हमारी रक्षा करो, हमें धन दो, असुरों को जला दो..."

राजा ने कुण्ड में हवि डाली। पता नहीं क्यों आज आग भभककर जली नहीं, लपटें नहीं उठीं—धुआं ही धुआं छा गया। बृहस्पति ने कहा, "देवता प्रसन्न नहीं हैं।"

व्याकुल होकर राजा बोला, "क्यों ? हमसे क्या अपराध हुआ है ?"

"अपराध ? गण भूख से दुखी है। प्रजा पर अत्याचार हो रहा है। पाप हमें घेर रहा है। राजा, इसी कारण सारा गण अप्रसन्न है, देवता भी।"

राजा भयभीत-सा उठ खड़ा हुआ। जल्दी से बोला, "मेरा भाग दे, आंगिरस !"

बृहस्पति ने यज्ञमण्डप में एक ओर रखे अन्न, फल, मधु, दूध इत्यादि की ओर संकेत कर दिया। राजा ने अचरज से पूछा, "इतना !"

"हां। इसमें अश्विनीकुमारों का भी भाग है। प्रजा के ऐसे भाग का अधिकारी भी राजा ही होगा।"

बिना एक शब्द भी बोले, राजा सिर झुकाए हुए यज्ञशाला से बाहर निकल गया।

बृहस्पति ने आज्ञा दी, "अग्नि, ये तीनों भाग राजा के यहां भेज दे।"





३

⊙○⊙

पत्थर के बड़े-से कटोरे में ऊपर तक भरा सोमलता का रस इन्द्र एक ही बार में पी गया और क्रोध से आंखें चढ़ा कर बोला, "बृहस्पति कह रहा था न? मैं जानता हूं। आज कई महीने से वह मुझ पर रुष्ट है। देखूंगा।"

उसकी हुंकार सुनकर पास बैठे युवक डर गए। अग्नि ने कहा, "इन्द्र, तेरा पिता द्यौस भी तुझ पर रुष्ट है।

"क्यों?"

"तेरे कारण उसका अपमान हुआ है। वह राजा है, तू प्रजा है। अश्विनीकुमार भी प्रजा हैं। बृहस्पति कहता है, प्रजा प्रजा को दण्ड नहीं दे सकती।"

इन्द्र खड़ा होकर बांहें तानता हुआ बोला, "मैं दण्ड दे सकता हूं। मैं न्याय कर सकता हूं। न्याय शक्तिशाली करता है। मेरी भुजाओं में शक्ति है।" उसने दोनों बांहें मोड़ी। मछलियां छटककर पत्थर की तरह कड़ी हो गः



उठाकर वह फिर से रस पीने लगा।

युवकों ने एक साथ प्रशंसाभरे स्वर में कहा, "तू वलवान है, इन्द्र!"

इन्द्र इधर से उधर टहलने लगा। उसके चौड़े, ऊंचे कन्धे सांड के डील की भांति बलिष्ठ दिखाई पड़ते थे।

अग्नि फिर धीरे से वोला, "पर राजा तुझसे पूछेगा।"

"क्यों पूछेगा?"



"राजा का अपमान हुआ है। वह अपमान नहीं सह सकता।"

एकाएक मुड़कर इन्द्र अग्नि के सामने आ खड़ा हुआ। उसकी पीताभा मिली लाल आंखें उत्तेजना के कारण और भी बड़ी-बड़ी हो गई थीं। बोला, "मैंने दम्भी अश्विनीकुमारों को जान-बूझकर उनकी कायरता और आलस्य के कारण दण्ड दिया है। इस बात से तो तेरे राजा का अपमान होता है, और उस तरफ प्रजा पर रोज असुरों का अत्याचार होता रहता है। कभी वे हमारी गायें छीन ले जाते हैं और कभी नदी पार करके अन्न चुरा ले जाते हैं। उस दिन वे नदी

पर नहाती हुई देवबाला इला और उसके पुत्र गय को
ड़कर नाव पर लिए जा रहे थे, तब किसने उनकी रक्षा
थी ? मैंने और तूने। तब तेरा राजा कहां था ?"

अग्नि धीरे से बोला, "इन्द्र, वह तो हमारा कर्तव्य था।
ाजा हमें इसीलिए यज्ञ का भाग देता है।"

पर इन्द्र ने जैसे उसकी बात सुनी ही नहीं। वह उसी धुन
में कहता गया, "इन सबसे तेरे राजा का अपमान नहीं होता ?
असुर वरुण के उपासकों के सैनिक जब भी चाहते हैं,
नदी के पानी पर रोक लगा देते हैं। और इस ओर हमारे
लिए मरुस्थल हो जाता है। देवों के बालक एक-एक बूंद पानी
के लिए तड़पते हैं। मैंने कितनी बार कहा कि असुरों से लड़-
कर जल पर अधिकार कर लिया जाए। पर राजा कुछ सुनता
ही नहीं। जब देखो, कायरों की तरह न लड़ने का उपदेश
देता है।"

अग्नि बोला, "पर राजा किसी कारण से ही तो ऐसा करता
होगा। असुर बड़े प्रतापी हैं। अश्विनीकुमार दस्र कहता था
कि युद्ध में भी असुर बड़े मायावी हैं। जल पर भी उन्हीं का
अधिकार है। उनसे युद्ध में पार पाना कठिन है। उनके पास
बड़े-बड़े पुर हैं, पत्थरों की इतनी मोटी-मोटी दीवारें ! तांबे
के भी कितने ही नए-नए अस्त्र-शस्त्र हैं। भण्डार के भण्डार
भरे पड़े हैं। और तुम्हारे पास क्या है ?"

अग्नि ने पास बैठे युवकों की ओर अंगुली उठाकर कहा,
"अंगुलियों पर गिनने लायक बाण और पत्थरों की गदाएं।
चार-छः के पास ही तांबे के एक-दो शस्त्र होंगे। अगर मरिच
पणि ने असुरों के यहां से चुराया हुआ तांबा हमारे हाथ न
बेचा होता, तो हम लोग अभी तक काठ और पत्थर के फालों
से ही धरती जोतते होते।"

शायद अग्नि की बात से इन्द्र कुछ प्रभावित हुआ। थोड़ी देर सोचकर उसने कहा, "दोनों अश्विनीकुमारों को मेरे पास आने के लिए कह दे। उनके बिना हम असुरों से कितनी ही बातों में पिछड़े रह जाएंगे।"

अग्नि बोला, "हां, ओषधि में उनसे बढ़कर कौन है? पलक झपकते रोग को वश में कर लेते है। फिर नौका चलाने में असुरों से भी बढ़कर..." कुछ रुककर अग्नि ने समझाया, "राजा को सब कुछ बताकर एक बार देख ले..."

इन्द्र फिर से उत्तेजित हो गया, "क्या करेगा राजा? वह कभी असुरों से युद्ध नहीं करेगा। हमें कभी न जल मिलेगा, न भरपेट भोजन। नहीं, इस तरह नहीं चल सकता। इन निर्मम, क्रूर असुरों को तू नहीं जानता क्या!"

अग्नि चुप ही रहा। असुरों के अत्याचार देखकर वह भी बहुत चिन्तित रहता था। उसी के सामने एक दिन असुरों ने नन्हे-से मघ को पानी के लिए कितना तड़पाया था!

बालक मघ को वे देवों की बस्ती से पकड़ ले गए थे। अग्नि उसी को खोजता-खोजता चुपके से नदी पार करके असुरों की सीमा में बड़ी दूर तक चला गया था। प्यास से तड़पते मघ को पहले तो असुरों ने कटोरा भर पानी दे दिया। पर जैसे ही उसने होंठ लगाया, एक असुर ने पत्थर मारकर कटोरा फोड़ दिया। प्यास से तड़फड़ाता मघ बिलख-बिलखकर रोने लगा, पर असुरों ने वही खेल कई बार किया। आखिर एक पत्थर मघ के माथे में लगा और वह तड़प कर नीचे गिर पड़ा।

उत्तेजित होकर अग्नि ने कमर में खुसे दो पत्थर निकाले और एक झोपड़ी के पास जा खड़ा हुआ। पहले तो

छप्पर में हलका-सा धुआं रिसता रहा, फिर थोड़ी ही देर बाद हवा के झोंके के साथ लपटें उठने लगीं। साथ ही असुर स्त्रियां तथा बच्चे भयभीत होकर चीख पड़े, "आग-आग।"

कुछ ही पल बाद बस्ती के बीच में एक और झोपड़े से आग की लपटें उठने लगीं और फिर पूर्वी छोर पर बना झोपड़ा भी एकाएक भक् से जल उठा। गांव के बीच में बने पत्थर के चबूतरे के पास आदिमाता तथा पशुदेवता की उपासना के लिए जुटे हुए असुरों में भगदड़ मच गई। कई बूढ़े असुर धरती पर पसरकर मिट्टी में माथा रगड़ने लगे तथा जोर से चिल्ला-चिल्लाकर देवताओं की प्रार्थना करने लगे।

अग्नि उनकी घबराहट देखकर मन ही मन हंसा और चक्कर काटकर चबूतरे के पास पत्थर के खम्भे से बंधे मघ के पास जा पहुंचा। निकट ही तांबे के छोटे-से घड़े में असुरों के उपासक ने पूजा के लिए पानी रख छोड़ा था। अग्नि ने उसे उठाकर मघ के होंठों से लगा दिया।

एक साथ तीन-तीन झोपड़ों में आग लग जाने से असुर बहुत घबड़ा गए थे। भगदड़ के कारण कोई किसी को संभाल नहीं पा रहा था। लपटें भड़ककर और भी फैलने लगीं। चबूतरे की ओर देखने का समय किसी के पास नहीं था। जल्दी-जल्दी बन्धन काटकर अग्नि ने मघ को मुक्त किया। पूछा, "मेरे साथ दौड़ सकता है?"

"हां।" मुक्त होकर प्राण बचाने का उत्साह मघ में कम नहीं था। अग्नि के कुछ कहने के पहले ही वह नदी की ओर भागा। अग्नि उसकी बांहें पकड़कर दौड़ने लगा। नदी के तट पर पहुंचकर भी दोनों ने सांस नहीं ली। आसपास कोई नौका नहीं दिखाई पड़ रही थी। थोड़ी ही दूर पर असुर नाविकों के झोपड़े थे। कहीं उनको जरा भी आहट मिल गई

तो लेने के देने पड़ जाएंगे। साहस करके अग्नि बालक के साथ भरी नदी में उतर पड़ा।

अभी वे मंझधार में ही पहुंचे थे कि पीछे जोर से हल्ला मचा। लगा कि कई व्यक्ति चिल्लाकर पानी में कूद पड़े और छप्-छप् तैरते हुए उनका पीछा करने लगे। अग्नि ने मुड़कर उस ओर देखा। उसकी सांस ऊपर की ऊपर, नीचे की नीचे रह गई।

"अब ?" अग्नि ने हांफते हुए बालक से इस प्रकार पूछा, जैसे वह मघ नहीं इन्द्र हो, जिसके बल का सहारा पाकर अग्नि कुछ भी कर सकता है।

पर मघ घबराकर रोने लगा। बोला, "नाव भी आ रही है। हाय मां! वे अपने भयानक देवता के सामने मेरी बलि दे देंगे।"

और कोई चारा नहीं था। अग्नि ने उसे डांटकर कहा, "चुप।" और उसे अपनी बाईं भुजा का सहारा देते हुए बोला, "जितनी तेज हाथ-पांव मार सके, मार।"

बरसात अभी-अभी बीती थी। नदी का पाट जैसे कोसों तक फैला हुआ हो। समुद्र की तरह दूर तक जल ही जल दिखाई पड़ता था। उस संकट में भी अग्नि मन ही मन हंस पड़ा। नासत्य की बात याद आई, "अग्नि, तेरी समाधि कभी जल में ही होगी!"

मघ को बांह पर संभाले अग्नि बाण की तरह तेजी से पानी पर फिसल रहा था। असुरों के तैरने की छपछपाहट तथा उनके नाव के चप्पुओं की आवाज बहुत निकट सुनाई पड़ने लगी थी। अगर वे अनुमान लगाकर बाण चलाने लगें तो? मघ न होता तो अग्नि इन असुरों के घर—पानी में ही उन्हें छका मारता। उनके जल के अधिपति देवाधिदेव वरुण

छप्पर में हलका-सा धुआं रिसता रहा, फिर थोड़ी ही देर बाद हवा के झोंके के साथ लपटें उठने लगीं। साथ ही असुर स्त्रियां तथा बच्चे भयभीत होकर चीख पड़े, "आग-आग।"

कुछ ही पल बाद बस्ती के बीच में एक और झोपड़े से आग की लपटें उठने लगीं और फिर पूर्वी छोर पर बना झोपड़ा भी एकाएक भक् से जल उठा। गांव के बीच में बने पत्थर के चबूतरे के पास आदिमाता तथा पशुदेवता की उपासना के लिए जुटे हुए असुरों में भगदड़ मच गई। कई बूढ़े असुर धरती पर पसरकर मिट्टी में माथा रगड़ने लगे तथा जोर से चिल्ला-चिल्लाकर देवताओं की प्रार्थना करने लगे।

अग्नि उनकी घबराहट देखकर मन ही मन हंसा और चक्कर काटकर चबूतरे के पास पत्थर के खम्भे से बंधे मघ के पास जा पहुंचा। निकट ही तांबे के छोटे-से घड़े में असुरों के उपासक ने पूजा के लिए पानी रख छोड़ा था। अग्नि ने उसे उठाकर मघ के होंठों से लगा दिया।



४

दो-तीन माह और बीत गए। यज्ञ होते रहे, पर न तो राजा खुलकर अश्विनीपुत्रों को बलिभाग देने का साहस कर सका, न इन्द्र के विरुद्ध कुछ कहने का ही। उसने अश्विनी को पता नहीं क्या समझा दिया था, वह भी चुप थी। हां, बृहस्पति की चमकीली आंखों के सामने राजा की आंखें झुकी रहती। उसे लगता कि लगातार कोई उसका अपमान कर रहा है। इसी ग्लानि के कारण मन ही मन वह इन्द्र से और भी कुढ़ने लगा था। इन्द्र की शक्ति उससे कहीं बढ़ी-चढ़ी है। वह राजा है, फिर भी जो मन चाहे, नहीं कर सकता इन्द्र; मनमाना कर सकता है।

उस दिन यज्ञशाला में बड़ी देर तक बातें चलती रहीं। असुरों के आक्रमण बढ़ गए थे। राजा द्यौस जानता था कि वरुण का प्रभाव असुरों पर ही नहीं और भी अनेक जातियों पर फैला हुआ है। आसपास के कितने ही अनार्य राज्यों पर

असुरों का दबदबा है। कई जातियां तो असुर वरुण की पूजा करने लगी थीं और कुछ अपने को असुर कहकर असुरों में ही मिलजुल गईं। इस कारण असुरों की शक्ति और भी बढ़ गई थी।

राजा को हर बात पर लड़ते रहना पसन्द भी नहीं था। फिर पास में ही बसे असुरों के शक्तिशाली गण से युद्ध करने में तो उसे अपने गण का नाश ही दिखाई पड़ता। जीवित रहना है तो दूसरा उपाय करना होगा। एकाध बार तो उसने प्रजा से कहा भी था कि हमें पूर्व की ओर बढ़कर अपने लिए और भी भूमि तैयार करनी चाहिए। हमारी संख्या बढ़ती जा रही है। पणियों, तथा दूसरी अनार्य जातियों से सीखकर हम लोग अन्न उपजाना भी शुरू कर सकते हैं, पर इतनी ही धरती बहुत नहीं है, हमें और धरती चाहिए। दैत्यों और असुरों की तरह व्यापार भी अपनाना चाहिए।

पर देवों के समूह में राजा के इस सुझाव का बड़ा विरोध हुआ था। बृहस्पति ने बताया था कि हम सुरगण श्रेष्ठ जाति के हैं। हमें अपनी भुजाओं के बल पर जीना चाहिए। व्यापार और खेती अनार्यों का धर्म है, हमारा नहीं। प्रजा इसे अपना नहीं सकती।

राजा यह सुनकर चुप रह गया था, किन्तु वर्षों से सुरगण को अभाव में जीवन बिताना पड़ रहा था। बस, किसी प्रकार काम चलता जा रहा था। कोई ठोस उपाय नहीं किया जा सका। गायों, घोड़ों तथा दूसरे पशुओं की संख्या कुछ बढ़ी जरूर थी, पर पेट भरने के लिए उतना ही काफी नहीं था। यज्ञ का भाग दिनोंदिन कम होता गया और अब स्थिति इतनी भयंकर हो गई थी कि विद्रोह के स्वर उठने लगे। कुछ दिन पहले यज्ञशाला के कोने में लगा हुआ अन्न का ढेर तथा दूध,

मधु, तिल आदि ही काफी होते थे, लेकिन अब देवों की संख्या इतनी बढ़ गई थी कि वह ढेर बहुत छोटा दिखाई पड़ने लगा था।

कल सांझ को यज्ञभाग बांटा गया तो कई देव बिगड़ खड़े हुए थे। रानी ने कहा था, "एक मुट्ठी अन्न और मांस के एक टुकड़े से हमारा पेट नही भरता। इतना तो हमारे बालकों के लिए भी काफी नही है। स्वर्ग का सुख भोगने वाली देव जाति क्या अन्न के बिना भूखों मरेगी ?"

कल राजा ने सभी को अधिक से अधिक सामग्री जुटाने की आज्ञा दी थी, पर आज कुछ अधिक नहीं जुटाया जा सका था। राजा यज्ञशाला में बैठकर बृहस्पति तथा अन्य वृद्ध देवों और ऋषियों के साथ विचार करने लगा। आखिर क्या किया जाए ? पर उत्तर किसी के पास नही था। यज्ञशाला में बैठे देवों और देवियों के चेहरे लगातार आधा पेट भोजन मिलने के कारण मुरझा-से गए थे। बच्चों के कुम्हलाए हुए चेहरों की ओर देखकर राजा को यज्ञ आरम्भ करने की आज्ञा देने का साहस नही हो रहा था। पता नही क्या हो ! भाग बंटते समय जब कल स्वयं रानी ही बोल पड़ी, तो आज कौन चुप रहेगा ! राजा के चेहरे पर चिन्ता की परछाईं साफ झलक रही थी।

बृहस्पति ने कहा, "हमारे युवकों में ही अनाचार बढ़ गया है। अगर पूरा श्रम किया जाए, तो कुछ न कुछ और मिले ही। अस्तु, राजन्, यज्ञ करने की आज्ञा दें।"

सुनकर राजा बौखला-सा गया। पूछ बैठा, "इन्द्र कहा है ?"

बृहस्पति की तेजी से चमकती आंखों में पैने व्यंग्य की झलक मिली। राजा ने आंखें झुका ली। भयानक स्थि

बचने के लिए ही आज उसने एकाएक वर्षों बाद पहली बार इन्द्र का नाम लिया था। सभी जानते हैं कि राजा द्यौस और इन्द्र भीतर ही भीतर एक-दूसरे के शत्रु हो गए हैं। पराक्रमी इन्द्र की शक्ति से शायद राजा मन ही मन डरता भी है, फिर उसे क्यों पूछ रहा है ?

बृहस्पति ने कहा, "वह आज-कल केवल अनिष्ट की सूचना देने के लिए ही मुझसे मिला करता है। उस पर किसी का अंकुश नहीं।"

ये शब्द राजा के लिए चुनौती थे। आज तक, सब कुछ होते हुए भी, किसी ने इस प्रकार खुले शब्दों में राजा का अपमान नहीं किया था। क्रोध से लाल पड़कर वह गरज उठा, "तू क्या बोलता है, बृहस्पति ! यहां ब्रह्म है, गणपति है। ब्रह्म और गणपति के होते गण का एक भी व्यक्ति निरंकुश नहीं है।"

बृहस्पति ने एक बार चारों ओर बैठी प्रजा पर निगाह डाली...हर आंख जैसे उसे अपना समर्थन करती-सी प्रतीत हुई। पूरे जोर से माथा ऊपर उठाकर बृहस्पति ने कहा, "है, इन्द्र निरंकुश है ! किसी से भी पूछ ले। इन्द्र जो चाहता है, वही करता है। राजा की अनुमति लिए बिना वह युद्ध करता है और राजा की आज्ञा के बिना ही सन्धि भी करता है। कौन रोकता है उसे ?"

राजा की भुजाएं फड़क उठीं। उसने कड़ककर कहा, "मैं। मैं राजा हूं। इन्द्र का पिता हूं। बुला इन्द्र को। उसके अनाचार के लिए मैं उसे दण्ड दूंगा..."

"मैं यहां हूं।" सहसा इन्द्र का हुंकार सुनाई पड़ा। यज्ञ-मण्डप के द्वार पर इन्द्र अकेला ही खड़ा था। लेकिन, उसके विशाल शरीर के कारण द्वार छोटा-सा लगता था। कोई दो

वर्ष बाद राजा ने इन्द्र पर सीधी दृष्टि डाली, कितना बदल गया था ! उसकी आंखों में अब सुकुमार दृष्टि की जगह विद्रोह की क्रोध थी और चेहरे पर कोमलता की जगह दर्प की चमक। कन्धे बैल के डील की तरह ऊंचे उठे हुए थे, उन पर इन्द्र के लम्बे सुनहरे केश लहरा रहे थे। छाती चट्टान की तरह कठोर दिखाई पड़ रही थी। दाहिने हाथ में विशाल गदा थी और बाएं हाथ में भयंकर ध्वनि करने वाला शंख।

राजा को लगा, जैसे असुरों ने पथ पर उसके रथ के आगे एक बहुत बड़ी चट्टान खड़ी कर दी हो...अडिग, भारी-भरकम चट्टान। भारी-भारी डग रखता हुआ इन्द्र वहां बैठी प्रजा के बीच से होकर यज्ञकुण्ड के निकट आ खड़ा हुआ। पास ही सोमरस से भरे, पत्थर तथा मिट्टी के कई घड़े रखे थे। वेदी पर अपना एक चरण टिकाकर गदा के सहारे कुछ तिरछा अड़ता हुआ इन्द्र बोला, "मैं यहां हूं !"

बृहस्पति ने ललकारकर कहा, "इन्द्र, वहां से हटकर खड़ा हो। वेदी से चरण हटा ले। वह स्थान यज्ञपुरुष का है। वहीं खड़ा होकर यज्ञपुरुष हमारा हव्य ग्रहण करता है, सोम पीता है।"

इन्द्र अडिग खड़ा रहा। ठहाका मारकर बोला, "सपने मत देख, ब्राह्मणस्पति। तेरा हव्य कोई यज्ञपुरुष स्वीकार नहीं करता। जिस ग्राम की प्रजा भूखों मरती है, एक-एक बूंद पानी के लिए तड़पती है और शत्रुओं के आक्रमण से भयभीत है, वह यज्ञ क्या करेगी ? और वहां के राजा की दी हुई हवि कौन स्वीकार करेगा ?"

राजा ने तड़पकर उठते हुए कहा, "तू ढीठ है, तू अपने से श्रेष्ठ पुरुषों का अपमान करता है। तू दण्ड का भागी है।"

इन्द्र का माथा जैसे और ऊंचा उठकर मण्डप में



तोरण को छूने लगा। बाण जैसी नुकीली दृष्टि से राजा को देखता हुआ बोला, "कौन है यह श्रेष्ठ पुरुष ? तू ? या यह ब्राह्मणस्पति, जिसे यज्ञभाग के नाम पर मुट्ठी भर अन्न देते लज्जा नहीं आती ? यह वही देवलोक है, जहां के ऐश्वर्य और सुन्दरता की कीर्ति सारी पृथ्वी पर फैली है ! और यही वे देव हैं, जिन्हें अमर कहा जाता है ! ये हड्डियां ही अमर होने का यश पाएंगी ? देवों के भक्षक असुरों का मित्र तू इनका रक्षक है !"



राजा बोला, "तू उद्दण्ड है। अनार्यों की भांति हमारे गण का द्रोही है।"

"गण का द्रोही मैं नहीं, तू है, जो शत्रुओं के अत्याचार से प्रजा की रक्षा नहीं करता! जो प्रजा को पेट भर खाने को नहीं देता।"

इन्द्र की ढिठाई से अपमानित होकर राजा का चेहरा फक् पड़ गया। वह दांत पीसकर बोला, "मैं जो खाता हूं, प्रजा को भी देता हूं। और कहां से दूं?"

"चाहे जहां से दे। अनार्यों से छीनकर दे। अन जहां जो कुछ भी है, वह सब देवों को मिलना चाहि

कर्तव्य है, उसे लाकर देना।"

"तू नीच है। अनार्यों की भांति हमें नीच कर्म करने को कहता है। तू दस्यु है।"

इन्द्र ने सीधे खड़े होते हुए कहा, "दस्यु भी अपने परिवार का पेट भरता है। तू मेरा पिता है, पर मुझे पेट भर खिला नहीं सकता। तू गण का राजा है, पर असुरों से गण की रक्षा तक नहीं कर सकता..."

"राजा की जय हो!" द्वार से घबराया हुआ दस्र भीतर आया। उसके शरीर पर खून के धब्बे थे। बाईं बांह पर घाव हो गया था। बोला, "अभी-अभी असुरों का एक समूह हम पर टूट पड़ा और उनका नेता अयोमुख अपने भाई लोम के साथ देवकन्या सन्धि और ताम्रा को पकड़ ले गया। युद्ध में तीन-चार देव युवक आहत हो गए। रक्षा कर!"

राजा अवाक् उसकी ओर ताकता रह गया।

इन्द्र ने ललकारकर कहा, "चुपचाप ताकता क्यों है, राजा? उठ, और प्रजा की रक्षा कर।"

बृहस्पति की ओर देखते हुए राजा ने गम्भीर स्वर में कहा, "तू जानता है, पुरोहित, असुरों का बल हमसे कितना बढ़ा हुआ है! फिर हम उन्हीं के दिए हुए पानी पर निर्भर हैं। हमारी-उनकी सन्धि है। मैं असुरराज के पास दूत भेजूंगा। वह ताम्रा और सन्धि को लौटा देगा। तू इन्द्र को समझा।"

किन्तु बृहस्पति के कुछ बोलने के पहले ही इन्द्र ने गरजकर कहा, "सावधान! जिस दिन अग्नि असुरों के दुर्ग में फंस गया था, उसी दिन मैंने प्रतिज्ञा की थी कि यदि कोई मेरे सामने असुरों की प्रशंसा करेगा अथवा उनसे सन्धि करने की बात कहेगा, तो मैं उसका वध कर दूंगा। मैं नहीं चाहता कि मुझे अपने गणपति अथवा ब्राह्मणस्पति की हत्या करनी पड़े!"

सारे यज्ञमण्डप में सन्नाटा छा गया था। किसी की सांस तक नहीं सुनाई पड़ती थी। राजा क्रोध में आकर उठ खड़ा हुआ, बोला, "इन्द्र, मैं तेरे अनाचारों से ऊब उठा हूं। मैं तुझे दण्ड देता हूं। तुझे यज्ञ में बलिभाग पाने से वंचित करता हूं। जा, चला जा! तुझे यज्ञशाला में आने का अधिकार नहीं है। और सुन ले, असुर मेरे मित्र हैं, यदि तूने फिर कोई उद्दण्डता की तो मैं तेरा वध करने की आज्ञा दूंगा।"

इन्द्र बाईं भुजा आकाश में उठाकर बोला, "कौन करेगा मेरा वध? कौन मुझे यज्ञभाग से वंचित कर सकेगा?"

"मैं! मैं गण का राजा हूं, मैं तेरा वध करूंगा।"

इन्द्र उपेक्षा के साथ हंस पड़ा, बोला, "तू काठ का राजा है!"

राजा झपट कर कई पग आगे बढ़ आया और चिल्लाकर बोला, "इसे यज्ञशाला से बाहर निकाल दो। मेरी आंखों के आगे से दूर कर दो, नहीं तो मैं इसका प्राण ले लूंगा।"

इन्द्र गरजकर बोला, "सावधान जो भी मेरे समक्ष आएगा, मैं उसका वध करूंगा..."

उसने अपनी विशाल गदा उठाकर कंधे तक तानी और एक ही आघात में सोमरस से भरा हुआ पत्थर का पात्र तोड़ डाला, फिर बैल की तरह मुंह लगाकर जी भर सोमरस पीने के बाद डकार भरता हुआ खड़ा हो गया। बोला, "किसे यज्ञकुण्ड में आहुति बनना है, आओ! आ, ओ द्योस...आ, मेरा पराक्रम देख!"

उसका प्रचण्ड रूप देखकर लोग थर-थर कांपने लगे। बच्चों ने माताओं की देह से सटकर मुंह छिपा लिया।

राजा क्रोध से कांपता हुआ इन्द्र पर टूट पड़ा। [illegible]

"तू अनार्य है। तूने सोम से भरा हुआ पात्र तोड़कर

अपमान किया है।"

इन्द्र ने कई आघात सहकर राजा को दूर ढकेल दिया। बोला, "जा, ओ द्यौस, तू पिता है। राजा है। अपने हाथों से मैं तेरा वध नहीं करना चाहता।"

"पर मैं तेरा वध करना चाहता हूं।" द्यौस के मुंह से फेन टपक रहा था।

"मुझे विवश मत कर, राजा!"

राजा ने झपटकर इन्द्र की दाढ़ पर घूंसा मार दिया। इन्द्र के मुंह से कई घूंट खून बाहर निकल आया। सोम पीने से इन्द्र की आंखें लाल हो गई थीं। खून के कारण चेहरा भयानक दिखाई पड़ने लगा। विराट शरीर फूलकर जैसे कई गुना बढ़ गया। उसने गदा संभाल ली। शरीर की एक-एक मांसपेशी तनकर कठोर दीखने लगी, जैसे सुनहरे पत्थर से गढ़ी गई हो। वह हुंकार भरकर बोला, "तो शस्त्र उठा।"

राजा ने दोनों हाथों की अंगुलियों को एक-दूसरे से जकड़ कर गदा-सी बनाई और इन्द्र की दूसरी दाढ़ पर भी आघात करते हुए बोला, "तेरे लिए मैं बिना शस्त्र के भी बहुत हूं।"

इन्द्र ने भारी-भरकम गदा सहित अपनी दाईं भुजा आकाश में तानकर कहा, "तो ब्रह्म साक्षी है, मैं भी शस्त्र त्याग रहा हूं।"

उसने घुमाकर गदा फेंक दी। वह जाकर पास ही पड़ शिलाखण्ड से टकराई। चट्टान चकनाचूर होकर धरती पर बिखर गई।

इधर राजा धनुष से छूटे बाण की तरह झपटकर इन्द्र से से लिपट गया, फिर पलक झपकते पता नहीं क्या हुआ, इन्द्र ने कब द्यौस को अपने सिर से भी ऊपर आकाश में उठा लिया और कब उसके पांव पकड़कर नचाने के बाद देवों की भीड़

में धरती पर पटक दिया, इसे कोई देख पाया, कोई नहीं।

राजा की हड्डियां चूर-चूर हो गई थीं और खून में सने मांस के लोथड़े बिखरकर सारी यज्ञशाला में फैल गए थे। पल भर स्तब्ध रहने के बाद जैसे भयंकर सपना देखकर सब की नींद टूटी। जो जहां था, वहीं धरती पर माथा टेककर स्तब्ध पड़ रहा। बृहस्पति ने उत्तेजना से कांपते स्वर में कहा, "इन्द्र, तूने पिता की हत्या की है।"

यज्ञशाला के अपने कोण में खड़े-खड़े ही अग्नि ने स्तुति की, "हे महाबली इन्द्र, तेरे पराक्रम से धरती थर-थर कांप रही है। तूने अपनी प्रचण्ड शक्ति से प्रजा की रक्षा की है।

"हे इन्द्र, तूने अपने विशाल भुजदण्डों से अपने पिता को आकाश में उठाकर, उसका पांव पकड़कर चक्कर कटाने के बाद धरती पर पटककर उसका बध कर दिया है!

"हे शत्रुमर्दन इन्द्र, देवों की परम्परा में ऐसा कभी नहीं हुआ। तूने पांव पकड़कर आकाश में नचाने के बाद धरती पर पटककर अपने पिता द्यौस का बध क्यों किया?

"हे इन्द्र, तेरे प्रताप से अन्धकार दूर भागता है। असुरों से जल पीड़ित है—हम जल से पीड़ित हैं। तू नदियों को उनके मार्ग पर स्थिर कर।

"हे इन्द्र, तुझे सोमरस प्रिय है। उसी तरह हमें भी तू अपना प्रिय बना ले। हमारी रक्षा कर। हम तुझे सोम देकर तेजस्वी बनाएं, तू हमारे शत्रु असुरों का नाश कर..."

इन्द्र ने आज्ञा दी, "बृहस्पति, तू यज्ञ करा, यजमान मैं बनूंगा।"

बृहस्पति अडिग खड़ा रहा। बोला, "तूने पिता की हत्या की है। तेरी आहुति यज्ञपुरुष स्वीकार नहीं करेगा।"

वेदी पर अपना दायां चरण रखता हुआ इन्द्र बोला,

"कौन है यज्ञपुरुष ? मैं ही यज्ञपुरुष हूं। मैं स्वीकार करूंगा। आज से ब्राह्मण भी यजमान के साथ हवि दे। मैं यज्ञपुरुष उसे स्वीकार करूंगा। बृहस्पति, तू यज्ञ करा और सबको यज्ञभाग दे। तू ब्राह्मणस्पति है।"

बृहस्पति खिन्न होकर बोला, "नहीं इन्द्र, यह अनाचार है। मैं तेरा यजन नहीं कराऊंगा। यज्ञभाग नहीं बांटूंगा।"

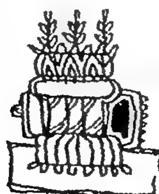
"तो तू भी जा। मैं आज से एक और मर्यादा स्थापित करता हूं—ब्राह्मणस्पति ही नहीं, गणपति भी यज्ञ का भाग बांट सकता है। ।"

"नहीं। मैं ऐसा यज्ञ नहीं कराऊंगा।"

"तो जा, बृहस्पति, मैं त्वष्टा के पुत्र विश्वरूप त्रिशिरा को पुरोहित बनाता हूं। विश्वरूप, तू यज्ञ करा।"

अपमानित होकर भी बृहस्पति के चेहरे का तेज कम नहीं हुआ। वह धीरे-धीरे पश्चिम के द्वार से बाहर चला गया और उसी समय पूर्व में प्रजा के बीच से उठकर त्रिशिरा दर्प के साथ चलता हुआ पुरोहित के आसन पर आ बैठा। उसके मन्त्रोच्चारण के साथ-साथ यज्ञ प्रारम्भ हो गया। सारी यज्ञशाला गूंज उठी—

गणानांत्वा गणपतिर्हवामहे...
प्रियानांत्वा प्रियपतिर्हवामहे...
निधीनांत्वा निधिपतिर्हवामहे...



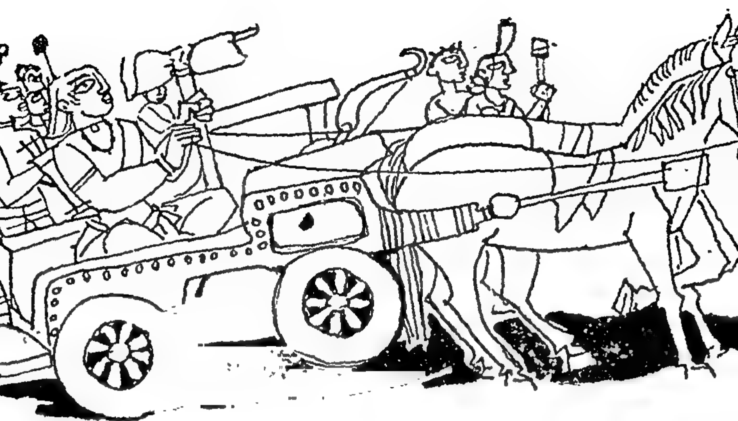


५

देखते ही देखते देव गण की व्यवस्था बदल गई थी। कितने ही परिवर्तन हो गए थे। इन्द्र को गण के बलशाली युवकों का समर्थन तो प्राप्त ही था, भूख-प्यास से कष्ट सहते प्रौढ़ योद्धाओं, वृद्धों, स्त्रियों तथा बालकों का भी समर्थन मिला। वैसे भी गण की रक्षा तथा उसके पालन-पोषण का भार इन्द्र ने अपने बलिष्ठ कन्धों पर उठा लिया।

इन्द्र राजा हो गया। उसके बल-विक्रम के गीत गाए जाने लगे।

राजा बनते ही इन्द्र ने सबसे पहला काम किया, शत्रुओं के गढ़ों पर आक्रमण। उसने दैत्य पुलोमा के दुर्गपर अचानक ही हमला बोल दिया। दिति के पुत्र दैत्यों तथा अदिति के पुत्र आदित्यों को जन्म से ही शत्रुता चलती थी क्योंकि दोनों गणों की माताएं आपस में शत्रु थीं। दैत्य भी असुरों की तरह अपने गढ़ तथा अपनी शक्ति के गर्व में डूबे



फिर देव गण में जो क्रान्ति हो गई थी, उससे भी उन्हें हर्ष ही हुआ। उन्होंने सुरों के राजा द्यौस के मरते ही सोचा कि देवों की शक्ति क्षीण हो गई। उन्हें दबाते कितनी देर लगेगी। और इन्द्र जैसा कम उम्र का युवक इस प्रकार सहसा उन्हीं के गढ़ पर आक्रमण कर देगा, इसकी तो किसी ने कल्पना भी न की थी।

बलवान और साहसी देव योद्धाओं को लेकर एक दिन इन्द्र अपने हरि नामक घोड़ों को रथ में जोतकर रातोंरात पुलोमा दैत्य के पुर पर टूट पड़ा।

दैत्य असावधान थे, फिर भी घमासान युद्ध हुआ। पुलोमा दैत्य की कन्या शची पौलोमी भी युद्ध में उतर पड़ी। उसकी सुन्दरता और वीरता की ख्याति इन्द्र बहुत पहले सुन चुका था। बचपन में वह घोड़े पर चढ़कर अपने पिता के साथ देवों के खेतों की ओर घूमते समय कई बार शची को देख भी चुका था। तभी से उस सुन्दर दैत्यकन्या के प्रति इन्द्र के मन



में एक मोह जग गया था।

आज सहसा वही शची वीरवेश में अपने रथ पर सवार होकर ठीक उसके सामने युद्ध करने के लिए आ पहुंची तो इन्द्र थोड़ी देर के लिए स्तब्ध रह गया। थोड़ी ही दूर पर अश्विनीकुमार दस्र घायल पड़े एक देव योद्धा को अपने रथ में डालकर उसकी चिकित्सा करने के लिए बाहर ले जाने की चेष्टा कर रहा था। उसका जुड़वां भाई नासत्य रथी दस्र तथा घायल की रक्षा के लिए युद्ध कर रहा था। सहसा उसकी दृष्टि इन्द्र पर पड़ गई। वह और शची आमने-सामने रथ खड़े करके स्तब्ध होकर एक-दूसरे को देख रहे थे। नासत्य ने अपने सामने खड़े दैत्य पर गदा से आघात पर आघात करते हुए चेतावनी दी, "इन्द्र, ताम्रा और सन्धि की बात भूल मत जाना..."

इन्द्र की नसों में खून की जगह जैसे आग की धार वह पड़ी। वह चौंक उठा। उसने दूसरे ही क्षण हाथ में पकड़ा

ाश फेंका और पलक झपकते ही शची के सारथी को
र धरती पर झटक दिया। शची के घोड़े भड़क उठे।
ाई-अचकचाई-सी शची अभी संभल भी न पाई थी कि
ने झपटकर उसको पकड़ लिया। उसका धनुष छीनकर,
ी की डोर में शची को फंसाकर इन्द्र ने उसे विवश कर
या।

इन्द्र के रथ के एकदम निकट तक खिंच आने पर सहसा ाची एक झटके से मुक्त हो गई। दूसरे ही क्षण उसने इन्द्र की छाती पर गदा से प्रबल आघात किया। पल भर के लिए इन्द्र विचलित हुआ, पर सामने ही शची को दूसरी बार गदा तानते देखकर वह सतर्क हो गया। रथ पर से सहसा छलांग लगाकर उसने शची को दोनों पंजों में जकड़कर ऊपर उठाया और अपने रथ पर फेंक दिया। उसके शस्त्र छीनकर उसे रथ में जकड़कर बांधते हुए इन्द्र सारथी से बोला, "मातलि, इसे तू ले चल, मैं पुलोमा को देखता हूं। मनु अकेला ही उस ओर जूझ रहा होगा..."

देवताओं और दैत्यों का युद्ध जमकर हो रहा था। अब तक दैत्यों की स्त्री-सेना भी सावधान हो चुकी थी। युद्ध में वे देवों या दैत्यों से किसी प्रकार कम नहीं थीं। शची को पकड़े जाते देखकर वह और भी क्रुद्ध हो उठीं। इन्द्र हंसा। बोला "इनसे लड़ने की बात तो मैंने सोची ही नहीं थी। वध म
करो, जितनी भी जीवित पकड़ी जा सकें, पकड़ने की चेष्
करो। हम भी असुरों तथा नागों की तरह अब शत्रु वन्दि
को दास-दासी बनाकर देवलोक की शोभा बढ़ाएंगे..."

किन्तु दैत्य बालाओं का आक्रमण साधारण न था।
की दुर्दशा वह देख चुकी थीं। उसके बन्दी बनते ही
मन में आग-सी भड़क उठी। शची जैसी प्रचण्ड शक्ति

युवती को इस प्रकार सहसा पकड़े जाते देखकर वे स्तम्भित रह गई थीं। उसे बचाने की वे कोई चेष्टा भी न कर पाईं, इसलिए संभलते ही पूरी शक्ति के साथ इन्द्र पर टूट पड़ीं। इन्द्र को रास्ते से हटाकर वे शची को रथ पर लेकर जाते मातलि को रोकना चाहती थीं।

इस ओर थोड़े-से ही देव सैनिक थे। पराक्रमी इन्द्र दैत्य-बालाओं की इस भयानक चपेट से अचकचा उठा। अपने प्रचण्ड धनुष-बाण तथा भारी-भरकम गदा संभालकर वह भी अड़ गया। दैत्यबालाओं को जीवित पकड़ने का स्वप्न पूरा होने की आशा नहीं रही। वह प्राणरक्षा के लिए आंख मूदकर शत्रुपक्ष का वध करने लगा।

दस्र को रथ लेकर सुरक्षित निकल जाने का अवसर देने के लिए नासत्य अब तक उसी ओर दैत्यों से युद्ध कर रहा था। दस्र के निकलते ही वह भी बचकर दूसरी ओर हटने की चेष्टा करने लगा। सामने से वह एकदम घिर चुका था। बाईं ओर से ही बचने का रास्ता था, क्योंकि उस ओर इन्द्र थोड़े से योद्धाओं के साथ अब तक दैत्यबालाओं का रास्ता रोके हुए था।

उस ओर पहुंचकर नासत्य ने अपना रथ संभाला। तूणीर में बाण भरे और रास संभालकर इधर-उधर देखने लगा। सहसा उसकी दृष्टि पश्चिम की ओर पड़ी। पुलोमा योद्धा दैत्यों की एक बड़ी-सी टुकड़ी के साथ उल्का की भांति तेजी से इन्द्र की ओर झपटा चला आ रहा था।

दूसरी ओर इन्द्र दैत्यबालाओं के कारण एक ही जगह उलझा रह गया था। कई देव युवक आगे बढ़कर इन्द्र को उनके आक्रमण से बचाए रखना चाहते थे, पर उन्हें अवसर ही नहीं मिल पा रहा था। ऐसा लगता था, मानो अकेला इन्द्र

ही हर जगह युद्ध कर रहा हो। जहां देखो, वहीं इन्द्र दिखाई पड़ रहा था। पर पुलोमा के वहां पहुंचते ही भयंकर संकट खड़ा हो जाएगा। इन्द्र किस-किस तरफ लड़ेगा! इस समय इन्द्र का रथ भी नहीं था, न सारथी मातलि ही। वह घोड़े पर सवार था। उसके तूणीर के वाण चुक गए थे और वह भयंकर वेग से गदा घुमाता हुआ युद्ध कर रहा था।

पल भर में ही नासत्य ने निश्चय कर लिया। उसने सबसे पहले शंख बजाकर इन्द्र को सावधान किया, फिर पश्चिम की ओर मनु के साथ शत्रुओं से लड़ते योद्धा देवों को सहायता के लिए इधर पहुंचने का संकेत करके स्वयं उसी ओर बढ़ आया। इन्द्र के बाएं पक्ष पर पहुंचकर ठीक अवसर पर नासत्य ने पुलोमा दैत्य की गदा का आघात अपनी गदा पर रोककर उसे व्यर्थ कर दिया।

पुलोमा की आंखों से अंगारे बरस पड़े। वह घोड़े की रास दांतों में संभालकर दोनों हाथों से पूरी शक्ति के साथ गदा चला रहा था। अश्विनीकुमार नासत्य को देखते ही वह चिल्लाकर बोला, "अच्छा हुआ, अश्विनीपुत्र, तुझे तो मैं कब से खोज रहा था। तू ही अपने नीचकर्मा इन्द्र का रक्षक है न! कायर, इतना अपमान सहकर भी उसी के साथ रहता है!"

नासत्य ने गदाघात करते हुए कहा, "राजा राजा है। अपना काम वह जाने, प्रजा अपना काम संभालेगी। तू अपनी खैर देख..."

नासत्य की गदा रोकी नहीं जा सकी। पुलोमा ने बचने की चेष्टा की, पर नासत्य ने जैसे पहले ही से अनुमान लगा लिया था। उसने घूमकर आघात किया। पुलोमा का बायां कंधा जैसे चूर-चूर हो गया। पर वह हटा नहीं, उसने तड़पकर गदा मारी और नासत्य के रथ में जुता एक घोड़ा तुरन्त ही

गिरकर मर गया। नासत्य रथ से कूद पड़ा। दूसरे ही क्षण दैत्य योद्धा उसे चारों ओर से घेरकर शस्त्र बरसाने लगे।

इस बीच पश्चिम में मनु के नेतृत्व में लड़ते देवों की स्थिति सुधर गई थी। उनका एकभाग अवसर पाकर गढ़के भीतर घुस गया था। वहां से स्त्रियां और बच्चों का हाहाकार सुनाई पड़ने लगा था। कई जगह आग की लपटें भी उठने लगी थीं। कई देव योद्धा नासत्य की ललकार सुनकर इस ओर पहुंच गए थे। दैत्य नारियों की सेना आधी कट चुकी थी और अब उनका उत्साह भय में बदल चुका था। वे किसी तरह प्राण बचाने लगीं।

अवसर पाते ही इन्द्र मुड़कर नासत्य के साथ पुलोमा के सैनिकों से युद्ध करने लगा। केवल दाईं भुजा से ही गदा चलाता हुआ पुलोमा अब भी देवों के लिए भारी पड रहा था। किन्तु अधिक देर नहीं लगी। इन्द्र दैत्यों की भीड़ को चीरता हुआ उसके पास पहुंचा और एकाएक पुलोमा पर टूट पड़ा। बिना शस्त्र का प्रयोग किए उसने पुलोमा के पत्थर जैसे कठोर शरीर को अपनी बलिष्ठ भुजाओं में जकड़कर पछाड़ दिया।

उसके गिरते ही दैत्यों की सेना में भगदड़ मच गई।

इन्द्र ने पुलोमा को उठाकर नासत्य के रथ पर डाल दिया। साथ ही आज्ञा दी, "नासत्य, तू इसका उपचार कर।"

मन ही मन नासत्य हंस पड़ा। शची पौलोमी के प्रति इन्द्र के मोह को वह प्रारम्भ से ही जानता है। उसने आज भी लड़ने को तत्पर खड़ी शची के सामने इन्द्र को चुपचाप खड़े देखा था। शची बन्दी बनाई जा चुकी थी। इन्द्र उसे मातलि को सौंप चुका है। आज पहली बार इन्द्र ने युद्ध में एक साथ दो-दो शत्रुओं को प्राणदान दिया था—पता नहीं वह क्या सोच रहा है।

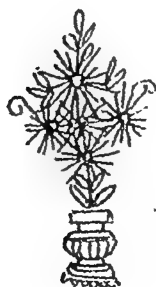
पुलोमा को संभालकर नासत्य धीरे-धीरे मार्ग बनाता हुआ देवों की सेना की ओर चल पड़ा।

दैत्यों की पराजय होने के कारण देव युवकों का उत्साह बढ़ गया था। उनके ठहाकों से दैत्यों के गढ़ की पथरीली दीवारें हिलती-सी लग रही थीं। चारों ओर से उठता शत्रु-पक्ष का चीत्कार इन्द्र की जय-जयकार में खो गया। नासत्य की तरह अनेक योद्धा इन्द्र की स्तुति कर रहे थे—

"हे इन्द्र, तेरे द्वारा रक्षित होकर हम प्रबल सेनावाले शत्रुओं को परास्त करेंगे। प्रहार के लिए प्रस्तुत शत्रु पर प्रहार करेंगे...इन्द्र, तू युद्धजयी है...

"हे इन्द्र, तू महान है, ऐसा करना कि शत्रु हमारे शरीर पर आघात न कर सकें। तू हमारा वध न होने दे...

"युद्ध के समय जिस देवता के रथ के सामने शत्रु नहीं आते, उस महाबली इन्द्र का यश गाओ। तेजोमय सोम से उसका अभिषेक करो..."





६

⊙○⊙

उस दिन से देवलोक का आधा भार जैसे त्रिशिरा के सिर पर ही आ पड़ा था। दैत्य पुलोमा और इन्द्र के बीच वार्ता में त्रिशिरा ने सबसे बढ़-चढ़ कर भाग लिया। उसके अथक प्रयास के कारण पुलोमा के साथ इन्द्र की सन्धि हो गई। शची को त्रिशिरा ने कुछ ही देर बात करने के बाद चकित कर दिया। वह कल्पना भी नहीं कर सकती थी कि युद्ध में उतना भयंकर कर्म करने वाला देवताओं का योद्धा राजा इन्द्र मन से इतना कोमल भी है। उसने आंखें झुकाकर हां कर दी।

शची और इन्द्र ने अग्नि को साक्षी बनाकर एक-दूसरे को ग्रहण किया। बलवान पुलोमा दैत्य की सुन्दरी और वीर पुत्री को इन्द्राणी बनते देखकर सारा देवलोक प्रसन्नता से खिल उठा।

महीनों तक उत्सव चलता रहा। देवों में विजेता इन्द्र जैसा राजा पा जाने के कारण अपार उत्साह भर गया
उन पर तरह-तरह के बन्धन थे। अब इन्द्र का व

अपने को स्वतन्त्र समझने लगे। चारों ओर से आय बढ़ने का अवसर मिल गया।

अब यज्ञों में मन्त्रों का उच्चारण करते समय आर्यों का हर्ष से भरा गम्भीर स्वर नदी के उस पार असुरों की बस्ती तक सुनाई पड़ता था। यज्ञशाला में जहां एक दिन तिल, घी, दूध, जौ आदि के छोटे-छोटे ढेर होते थे, अब वहां अन्न रखने को जगह भी नहीं रह गई थी। देवों ने यज्ञशाला को और भी बड़ी बनाने का निश्चय किया। पश्चिम की ओर एक नया छप्पर डाल दिया गया।

ग्राम के पूर्व की ओर भी बढ़कर नए-नए क्षेत्रों पर अधिकार जमाया जा रहा था। पहले असुरों के अत्याचार से देवलोक आतंकित रहता था, पर कुछ दिनों के लगातार संघर्ष के बाद स्थिति बदल गई। देवलोक में शान्ति छा गई थी। इन्द्र अब गर्व से अपने लिए प्रस्तुत काठ के भव्य आसन पर बैठकर न्याय करता था। आसन पर सोना-चांदी तथा कितने ही चमकीले पत्थर जड़े हुए थे। दानवों का एक शिल्पी सुदूर पश्चिम में समुद्र के उस पार से आया था। उसने नील नदी के तट पर विशाल भवन देखे थे, और वहीं देखा था वहां के महान योद्धाओं का सिंहासन। वे योद्धा अपने को देवता सूर्य का पुत्र कहते थे। उनके सिंहासन को देखकर उसने भी एक दिन वैसा ही सिंहासन बनाने का निश्चय किया था।

लौटकर उसने पूरा सिंहासन बना भी लिया था, और जिस दिन उसे लेकर वह दानवराज के पास जाने वाला था, ठीक उसी दिन सहसा देवों का आक्रमण हुआ। दिन भर भयानक युद्ध चलता रहा। सिंहासन के पास ही खून में लथपथ शिल्पी तड़प-तड़पकर मर गया। देव अपने साथ सिंहासन उठा लाए। उसे देखकर प्रजा की आंखें फैली की फैली रह गईं। ऐसे आसन

की तो वह कल्पना भी न कर सकते थे। एक भी युवक ऐसा न था, जिसकी आंखों में उस सिंहासन के प्रति लोभ न कौंधा हो।

उस दिन यज्ञशाला में सिंहासन भी रखा गया।

यज्ञ समाप्त होने के बाद इन्द्र की आज्ञा से त्रिशिरा देवों को भाग बांटने लगा। अन्त में सिंहासन बच गया।

कुछ देर तक मण्डप में सन्नाटा छाया रहा। एकाएक त्रिशिरा ने कहा, "यह सिंहासन हमारे पराक्रमी इन्द्र को ही शोभा देगा। आज से यह इन्द्रासन हुआ। इन्द्र की इच्छा के बिना जो भी इस आसन पर बैठे, उसे वज्र नष्ट कर दे। उस पर बैठा हुआ इन्द्र सबसे श्रेष्ठ होगा। उससे महान कोई नहीं।"

त्रिशिरा के निर्णय से देव युवकों में खुशी की लहर दौड़ गई। सच ही तो है, इन्द्रासन पर बैठने के लायक इन्द्र को छोड़कर और है ही कौन?

इन्द्र त्रिशिरा पर प्रसन्न था। बृहस्पति तो केवल कठोर और कटु सत्य कहना जानता था। त्रिशिरा मन को समझता है। वह देव गण के हित के लिए सब कुछ स्वयं ही निर्धारित कर सकता है। सचमुच उसकी बुद्धि तीन सिरों की बुद्धि के समान है। इन्द्र को कहीं किसी प्रबन्ध में त्रुटि नहीं दिखाई पड़ती।

धीरे-धीरे त्रिशिरा के अधिकार बढ़ते गए। उसने एक और भी सुविधा दी। यज्ञ में हवि देते समय मन्त्रोच्चारण तथा स्तुति के बाद भी देवों को बड़ी देर तक अपना भाग लेने के लिए बैठे रहना पड़ता था। उनके परिश्रम से ही तो सब कार्य होता है। उन्हें विश्राम और मनोरंजन भी तो करना = इसलिए त्रिशिरा ने प्रबन्ध कर दिया कि देवों के भाग =

...द्वारा घर पर ही भेज दिए जाया करेंगे।

इन्द्र को त्रिशिरा पर पूरा विश्वास हो गया। भाग बांटने का पूरा भार त्रिशिरा पर छोड़कर वह निश्चिन्त हो गया।



त्रिशिरा का पिता त्वष्टा देव उस समय सुरलोक का सबसे योग्य शिल्पी था। वह कितनी ही कलाओं में पारंगत था। वह सुन्दर से सुन्दर भवन, काठ की मूर्तियां, अस्त्र-शस्त्र सब कुछ बनाने में कुशल था। अपने पुत्र की प्रगति देखकर वह प्रसन्नता से फूला नहीं समाया। वह इन्द्र की स्तुतियों की रचना करता और उन्हें गा-गाकर इन्द्र तथा अन्य देव युवकों का उत्साह बढ़ाया करता था।

फिर तो देवलोक अपने पूर्वजों के समय से कहीं आगे बढ़ गया। त्वष्टा देव की पत्नी असुर जाति की थी। वह सब कुछ होते हुए भी प्रसन्न नहीं रहती। उसकी तीखी आलोचनाओं से त्वष्टा कभी-कभी चिन्ता में पड़ जाता। कभी वह त्रिशिरा की हंसी उड़ाती, कभी देवलोक की।

उस दिन त्वष्टा नाराज हो गया। बोला, "इस समय पृथ्वी पर कौन ऐसा है, जिसके पास देवताओं के समान बल हो। देवों के समान सुन्दर, स्वस्थ और पराक्रमी योद्धा हैं किसी जाति में ?"

त्वष्टा की असुर पत्नी ने हंसकर कहा, "पराक्रम की क्या कहते हो ! आखिर पणि और दूसरी जातियों के लोग भी तो चुराकर या बलपूर्वक छीनकर पेट भर लेते हैं। तुम देवों में भी तो यही चलता है न ? तुम लोगों के पास है ही क्या ? न रहने का घर है, न सुख से जीने के साधन। पानी तक पर तो बन्धन हैं। उसे भी किसी तरह चुराकर या लूटकर लाना पड़ता है। असुरों के यहां देखा है कभी ? बड़े-बड़े कुण्ड होते हैं, जिनमें वरुण की कृपा से वर्ष भर अमृत जैसा पानी भरा रहता है !"

त्वष्टा खीभकर बोला, "बस एक ही बात का इतना अभिमान है असुरों पर। जरा सोचकर बोल तो, देवों को

कर और किसी के पास इन्द्रासन है !"

"बस, जब देखो, उसी सिंहासन के अभिमान में डूबे रहते ...वह भी तो दानवों की कला है, तुम्हारा उसमें क्या है ? ...र कुछ भी है तुम्हारे पास ? देव लोग खा-पीकर खूब पेट ...र लेंगे, फिर सोमलता घोंटकर उसका रस पी लेंगे और नशे ...धुत्त होकर सो जाएंगे। फिर न घर की सुध, न किसी की ...चिन्ता !"

"तू क्या जाने !" त्वष्टा मुसकराया, "तेरे असुर तो ...पाणियों को अन्न देकर उसी से सुरा बनवाते हैं ! अन्न भी सड़-...कर बरबाद होता है और प्रजा का भाग अलग से मारा जाता है। सड़े हुए अन्न का रस पीकर असुर योद्धा चारों ओर आतंक फैलाते हैं। और हमारे सोमरस में बल बढ़ाने की शक्ति है। उसके पीने से हम तेजस्वी हो जाते हैं। उस दिन देखा नहीं था...निकम्मे राजा द्यौस को मारने के पहले हमारा इन्द्र बैलों की तरह आधा कुण्ड सोमरस पीकर पर्वत की तरह विशालकाय और सूर्य की तरह तेजस्वी दीखने लगा था..."

"सब देखा था।" त्वष्टा की पत्नी ने होंठ बिचकाकर कहा, "सोमरस का गुण दुर्गुण भी तो बन सकता है। पीकर सारे देव यहां-वहां बेहाल पड़ रहते हैं—कोई भी सुध में नहीं रहता। असुर तुम लोगों के अत्याचारों से तंग आ चुके हैं। किसी भी दिन उन्होंने...तुम्हारे पास तो ऐसे घर भी नहीं हैं कि भागकर छिप सको। और असुरों को देखा है, उनके राजा और पुरोहित पत्थर के दुर्गों में रहते हैं। चारों ओर बलवान असुरों का पहरा रहता है। उनकी आंख बचाकर वायु भी भीतर नहीं जा सकती। और एक देवताओं का यह पुरोहि... है...देखो जरा !" उसने अपने बेटे त्रिशिरा की ओर संके... किया, "इसे देवताओं का सबसे ऊंचा पद प्राप्त है। इन्द्र

इसे प्रणाम करता है, पर वह रहता किस प्रकार है, जैसे कोई साधारण-सा बढ़ई का बेटा हो..."

त्वष्टा क्रोधकर उठ खड़ा हुआ। बोला, "चुप रह! सावधान, यदि आज से देवों के पुरोहित या देवराज के विरुद्ध अपमान के शब्द निकाले तो मैं तेरा वध कर दूंगा। तेरे असुरों में सब कुछ विचित्र है। वहां हर एक की अलग सम्पत्ति है। कोई विशाल भवनों में रहता है और कोई झोपड़ी में। किसी के पास अपार धन और अन्न है, कुछ भूखों मरते हैं। असुरों में ही कोई राजा का प्रिय है और कोई दास बना दिया गया है। हम देवों में सब समान हैं!"

त्वष्टा ने रुककर गर्व के साथ त्रिशिरा की ओर संकेत करते हुए कहा, "इस विश्वरूप से पूछ, सबको समान भाग बांटता है। इन्द्र और किसी भी देव युवक में कोई अन्तर नहीं। हम किसी को छोटा नहीं समझते। यहां बन्दी बनाकर लाए गए शत्रु और दस्यु ही दास हैं, देव नहीं। दास ही सेवा करते हैं। हम ब्रह्म के उपासक हैं। यज्ञ के समय ब्रह्म जो आज्ञा देता है, वही हमारा धर्म है। यहां किसी एक व्यक्ति का शासन नहीं चल सकता। वह कोई भी हो। राजा को ब्रह्म इसलिए चुनता है कि वह प्रजा की रक्षा, न्याय और पालन-पोषण करे, उसे नोच-खसोटकर अपने पेट और अपनी विलासिता के लिए ही सब कुछ न करे!"

वह उठकर बाहर चला गया।

त्रिशिरा पास ही सिर झुकाए बैठा अपने मां-बाप की बात चुपचाप सुनता रहा। वह जानता था कि जब से इन्द्र ने उसे अपना पुरोहित बनाया है, तब से पिता त्वष्टा उसका अधिक आदर करने लगा है, साथ ही वह स्वयं भी देवलोक के हित के लिए और भी श्रम से काम करने लगा।

मां उठकर उसके पास आ खड़ी हुई। बोली, "त्रिशिरा, तू देख रहा है न ? यह देवलोक ऐसा ही रह जाएगा। और तू भी इनका भिखारी पुरोहित बना रहेगा। कभी तूने मेरे यहां जाकर देखा होता तो समझता। असुर राजा अरिष्ट इस समय पृथ्वी पर सबसे महान और सबसे धनी राजा है। देवों का गण उसके सामने पल भर भी नहीं ठहर सकता। अगर असुर तेरे साथ हो जाएं तो तू क्या नहीं बन सकता ! पर मेरे सपने पूरे हों, तब न !"

वह सिर झुकाकर चल पड़ी। त्रिशिरा ने टोंककर कहा, "मां, मैं तेरा पुत्र हूं। और कौन बताएगा मुझे ? बोल, क्या करूं, जिससे तेरा स्वप्न भी पूरा हो, और मेरी शक्ति बढ़े ?"

मां रुककर कई पलों तक उसे घूरती रही, फिर बोली, "तू शक्ति चाहता है ?"

"क्यों नहीं चाहता, मां !" त्रिशिरा ने अटक-अटककर अपने मन की बात जताई, "मैं जानता हूं...असुरों के यहां पुरोहित की कितनी पूजा होती है। वह चाहे तो एक संकेत पर कुछ भी कर सकता है। और यहां...यहां क्या है ? इन्द्र मुझे प्रणाम भले ही करता हो, पर है वही सब कुछ। उसके विरुद्ध एक शब्द का भी उच्चारण हो जाए, तो बस...मैं किसी का दास नहीं, शक्तिशाली बनकर जीना चाहता हूं।"

असुरबाला कुछ देर सोचती रही, फिर बोली, "पर तेरा संस्कार भी तो देवों का ही है। देख जरा, मैंने सोचा था, इन्द्र से कुपित होकर यह आंगिरस बृहस्पति शायद विद्रोह करे, पर वह एक ओर चुपचाप बैठा मन्त्र रचा करता है। और अश्विनी के दोनों बेटों को ही देखो, अब तक इन्द्र ने अपने दण्ड से उन्हें छुटकारा नहीं दिया है। वे अब भी यज्ञ में भाग नहीं पाते, पर इन्द्र के लिए प्राण देने को तत्पर रहते हैं ! कहीं तू भी..."

"नहीं मां, मैं कायर नहीं हूं ! मुझ पर विश्वास कर !"

मां ने सिर हिलाकर कहा, "मेरे विश्वास करने से कुछ नहीं होगा। लाभ होगा, जब असुर राजा अरिष्ट विश्वास करे, सेनापति नमुचि विश्वास करे...इसके लिए तुझे दुस्साहस करना होगा। तू तैयार है ?"

"तैयार हूं, मां। जो कुछ भी तू कहेगी, करूंगा...अगर मैं कर सका तो..."

"कर सकता है। तेरे पास शक्ति है, तू कर सकता है, पर चाहे तब...यह तो तू जानता है न कि अपनी शक्ति बढ़ाना या शत्रु की शक्ति को घटाना एक ही उपाय है। समझ जाएगा...प्रतीक्षा कर, मैं तुझे बताऊंगी।"

मां जल्दी से चली गई। त्रिशिरा बड़ी देर तक सिर झुकाए सोचता रहा। उसके मन में सपने तैर रहे थे—कोई ऐसा भी दिन आएगा, जब वह भार्गव शुक्राचार्य की तरह असुरों को अपने संकेतों पर नचा सकेगा ! वह संसार में जो कुछ भी चाहेगा, पा लेगा...

सहसा एक दास ने भीतर आकर प्रणाम किया। बोला, "यज्ञशाला में जाने की घड़ी आ गई है, देव ! रथ तैयार है।"

"हां !" त्रिशिरा चौंककर बोला, "चल, मैं आता हूं!" फिर झटके से उठा और दास के पीछे-पीछे बाहर निकलकर रथ पर बैठ गया।



७

अपनी असुर पत्नी से लड़कर त्वष्टा उस रोज वहां से हट तो आया था, पर उसे लगा कि बहुत-सी बातें ऐसी थीं, जिन्हें न मानने से अपनी ही हानि होगी। इधर इन्द्र को नेता बनाने के बाद देव जाति ने उन्नति अवश्य की थी, पर उसे लगातार युद्ध करना पड़ रहा था। शत्रुओं की संख्या बढ़ती ही जा रही थी।

देवों ने दूर-दूर तक धावे मारकर दूसरी बस्तियों से धन-धान्य छीनना शुरू कर दिया था। पर वे किसी को बहुत हानि नहीं पहुंचा पाते थे। असुरों के बड़े-बड़े गढ़ों, दैत्यों और दानवों के पथरीले दुर्गों को इधर-उधर से तोड़ देना ही बहुत नहीं था। वे देखते ही देखते फिर से अपना सारा काम ठीक कर लेते। अभी तो उन लोगों को ठीक से संभल पाने का अवसर नहीं मिल रहा है, पर जिस दिन वे सावधान हो जाएंगे, उसी दिन से देवताओं पर आक्रमण होने लगेगा। उस संकट से उबरना

देवों के लिए कठिन होगा। छिपने के लिए एक छोटा-सा गढ़ भी तो नहीं है देवलोक में!"

यह काम त्वष्टा को ही करना पड़ेगा।

सारे ग्राम में घूम-घूमकर त्वष्टा रात-दिन मन ही मन युक्ति सोचने लगा। ग्राम के कई वृद्धों से मिलकर उसने अपना विचार बताया। अग्नि, नासत्य, दस्र, मनु आदि से मिला। फिर उन सब के साथ वह इन्द्र के पास गया।

उसका प्रस्ताव सुनकर इन्द्र प्रसन्न हो गया। उसे उठाकर छाती से लगाता हुआ बोला, "तू ही इसे कर सकता है, देव, तू विश्वकर्मा है! तू देवलोक को यह वरदान दे। देवों के लिए तू एक नए विश्व का निर्माण करने जा रहा है। मैं तुझे अधिकार देता हूं, तू जितने भी दास चाहे, जिस देव की आवश्यकता समझे, उन्हें साथ लेकर तुरन्त यह शुभ काय प्रारम्भ कर दे..."

फिर दिन पर दिन बीतने लगे। नदी के तट से लेकर गांव को चारों ओर से घेरनेवाली गढ़ की एक लम्बी दीवार धीरे-धीरे उभरने लगी। देवों के बालक, स्त्रियां और पुरुष सभी उत्साह से इस निर्माण में जुट गए थे।

ग्राम के बीचोंबीच सबसे पहले त्वष्टा ने इन्द्र के लिए काठ, मिट्टी और पत्थर का एक विशाल सुन्दर भवन खड़ा किया। बीच में जल का बड़ा-सा कुण्ड बनाया। पीछे की ओर एक सुन्दर उपवन भी लगाया। जिस दिन वहां का काम पूरा हुआ, त्वष्टा ने इन्द्र को उस नए भवन में आकर रहने का आवाहन किया।

देवलोक का बच्चा-बच्चा उस भवन को देखकर चकित रह गया। कोई सपने में भी नहीं सोचता था कि देवलोक में कभी इतना सुन्दर भवन खड़ा हो जाएगा। उपवन में पहुंचकर

तो शची पौलोमी मुग्ध हो गई, बोली, "यहां आते ही मन कितना आनन्दित हो उठता है !"

इन्द्र ने मुस्कराकर त्वष्टा का अभिनन्द किया। बोला, "देव, तू सचमुच विश्वकर्मा है। इस उपवन का नाम होगा नन्दन कानन और इस भवन का नाम है, वैजयन्त। यह असुरों पर हमारी विजयों का प्रतीक होगा !"

त्वष्टा को अब पूरी छूट मिल गई थी। वह जहां, जैसे भी चाहता, काम करता था। देवों की नगरी अमरावती का



निर्माण एकदम नए ढंग से होने लगा।

पर उन्हीं दिनों एक संकट खड़ा हो गया। देवों का प्रचण्ड योद्धा मनु एक दिन यज्ञ से लौटते समय ग्राम के पश्चिमी छोर की ओर पहुंच गया। वहां कुछ वृद्ध बैठे बातें कर रहे थे। मनु उन्हें दूर से ही प्रणाम करते हुए आगे बढ़ जाना चाहता था। पर वह अभी कुंज की ओट में ही था कि एक व्यक्ति की बात सुनाई पड़ी, "हम पर तो फिर वही संकट टूट पड़ा। जल की समस्या अब भी वही है !"

"पर यह संकट इस बार की वर्षा के बाद तो दूर ही हो जाएगा..."

पहला देव हंसा। बोला, "तू सपने देखता है, त्वष्टा ने ये जो थोड़े से कुण्ड बनाए हैं, उनमें कितना जल इकट्ठा होगा। वर्षा के बल पर उन्हें भरकर तू समझता है कि हम सब का काम हमेशा चलता रहेगा। फिर वर्षा का भी क्या ठिकाना—हुई, न हुई। जल का देवता वरुण तो असुरों पर ही रीझा हुआ है, हमारा साथ कौन देता है!"

"इन्द्र देगा!" दूसरे देव ने जरा तेजी से कहा, "तू इन्द्र के रहते इस तरह की ओछी बातें करता है। हमारा इन्द्र क्या नहीं कर सकता!"

"क्या कर रहा है! जब इसका पिता द्यौस राजा था, तब भी तो यही सब होता था। अब तो फिर से वही अन्न का संकट खड़ा हो गया है। कोई सुननेवाला नहीं। इधर चार-पांच मास से अन्न-भाग धीरे-धीरे कम होने लगा और अब तो आधा ही हो गया। त्वष्टा ने इन्द्र के लिए भवन बना दिया। वहां इन्द्रासन पर शची के साथ बैठकर गन्धर्वों और अप्स-राओं का नृत्य देखने से ही इन्द्र को छुट्टी नहीं मिलती। उसे तो कल्पना भी नहीं होती होगी कि देवलोक पर फिर से अन्न का संकट आ पड़ा है। किसकी आशा करें? आज का भाग दिखाऊं तुझे, कितना मिला है? देवी रागा कूट-पीसकर भोजन बना रही है। उतने से तो बच्चों का भी पेट नहीं भरेगा!"

कुछ देर चुप्पी छाई रही। लगा कि सभी उस देव की बातों से सहमत हैं। मनु यह सब सुनकर चकित रह गया। ... इन्द्र तो दूर, स्वयं मनु को भी नहीं पता था कि प्रज... इस प्रकार आधा पेट खाकर जीवन बिताना ...

लेकिन ऐसा होता क्यों है ? देवों की खेती से भी अब तो बहुत अन्न उपजता है !"

"इसका दोष किसे दिया जाए, देव, किसके कारण फिर से यह स्थिति खड़ी हो गई ?" नीचे चट्टान पर पसरा पड़ा एक मरुत योद्धा पूछ बैठा।

"सब कुछ मैं ही कहूं ?" देव वृद्ध नाराज हो गया। बोला, "जाकर पूछो त्वष्टा के पुत्र त्रिशिरा से। वही तो भाग बांटता है। और अब तो उसने नियम भी ऐसा बनवा दिया है कि भाग बांटते समय यज्ञमण्डप में कोई नहीं रहता...उंह होगा। मैं ही क्यों मरूं ? सभी मरेंगे। जब भूख से पेट ऐंठेगा तो सभी चिल्लाएंगे। मैं अकेला ही क्यों इन्द्र का कोप सहूं..."

मनु बड़ी देर तक खड़ा सोचता ही रह गया। देवों में यह कैसा रोग फैल रहा है ! गण की सबसे बड़ी शक्ति ब्रह्म है। उसी की आज्ञा से सब कुछ होता है। पर जब इस तरह सब तटस्थ हो जाएंगे, या एक-दूसरे पर ही अविश्वास करेंगे तो कैसे चलेगा ? ब्रह्म अखण्ड है, फिर यह टूटन क्यों ?

उधर से बातें बन्द हो गई थीं। देव लोग शायद मन में चिन्ता लेकर अपने-अपने घरों की ओर चले गए थे। मनु वहां से हटकर धीरे-धीरे नदी की ओर बढ़ चला। उसका मन यह सब सुनकर कड़वा हो गया था। देवलोक के शासन और रक्षा का भार संभालने वाले सब युवक जब मिलकर बैठते थे तो कितने उत्साह से बातें करते थे ! त्वष्टा के निर्माण के साथ-साथ वे लगातार देवों की उन्नति की बात सोचते, पर वास्तव में कुछ और ही हो रहा है। यह अशुभ है। इससे देवों का कल्याण नहीं होगा।

पहाड़ी की ओर पहुंचकर वह एक चट्टान पर बैठ गया। खूब टटकी चांदनी रात खिली हुई थी। मनु अपलक नदी की

ओर ताक रहा था। एकाएक उसे लगा जैसे रेत पर कुछ परछाइयां चल रही हैं। उनके कन्धे तथा सिर पर बोझ लदे थे। मनु समझ नहीं पाया कि यह सब क्या हो रहा है। अगर ये सब त्वष्टा के लिए कोई सामग्री लाते तो उसे ग्राम की ओर ले जाते, पर ये तो ग्राम से बाहर की ओर जा रहे हैं!

अपना खंग संभालकर वह नीचे उतर आया। पता नहीं कैसा सन्देह उसके भीतर सुलगने लगा। कहीं पणियों का दल चोरी करने के लिए तो इधर नहीं निकल आया है!

रेत पर झुक-झुककर चलता हुआ वह एकदम तट के पास पहुंच गया। ठीक से समझ-बूझकर ही कुछ करना चाहिए। कहीं ऐसा न हो कि वह शंख बजाकर देवों को जुटा ले और रात में स्वयं देवों के ही बीच युद्ध हो जाए। अपनी ही हानि करा देने पर सवेरे सब उसकी हंसी उड़ाएंगे।

ठीक सामने एक नौका लगी थी। उसी पर एक-एक करके सब बोझ लाद रहे थे। नाविकों में से किसी ने कुछ कहा। सुनकर मनु की नसें खड़ी हो गईं। ये तो असुर हैं, फिर ?

वह कुछ और आगे बढ़ा। बोझा ढोकर लानेवाले तो देवों के ही दास हैं। उनके मस्तक पर बंधी पट्टी को मनु अंधेरे में भी पहचान रहा था। यह सब क्या हो रहा है ? कहीं दासों ने ही मिलकर असुरों को...

कुछ ही देर में नाव चल पड़ी और तेजी से मझधार की ओर तिर गई। तट पर खड़े दासों का झुंड ग्राम की ओर लौट पड़ा। वे सब एकदम चुप थे, जैसे किसी ने उनके होंठों को चिपकाकर बन्द कर दिया हो। मनु समझ नहीं पाया कि क्या करे! पर इस रहस्य का पता तो लगाना ही होगा।

कहीं किसी व्यापारी की नाव हुई तो ? पर व्यापारी बिना इन्द्र की आज्ञा लिए, इस प्रकार छिपकर क्यों जाएगा ?

फिर असुरों की नौका पर ?

सहसा मनु ने देखा कि सबसे पीछे एक व्यक्ति धीरे-धीरे लंगड़ाता हुआ चल रहा है। वह औरों से काफी पीछे रह गया। इससे अच्छा अवसर नहीं मिलेगा !

मनु हाथ-पांव के वल रेत पर तेजी से रेंगता हुआ आगे वढ़ा। दूसरी ओर से घूमकर वह थोड़ी ही दूर पर रास्ते में जा वैठा और घुटनों के वल पड़े-पड़े प्रतीक्षा करने लगा। जैसे ही दास निकट पहुंचा, मनु ने तेजी से छलांग लगा दी। क्षण भर का भी अवसर दिए विना उसने दास का मुंह वाएं हाथ से दवोच लिया और उसे लेकर रेत पर गिर पड़ा। साथ ही उछलकर उसके ऊपर सवार हो गया।

उसे दवाए हुए मनु बड़ी देर तक नीचे पड़ा रहा। दास के छटपटाने से रेत उड़ रही थी, मनु ने आंखें मूंद लीं। थोड़ी देर में ही दास बेबस होकर शान्त हो गया।

आंखें खोलते ही वह चौंक पड़ा, "कौन ?"

"अरे, तू है, मनु !" उसे चकित स्वर सुनाई पड़ा, "हम दोनों अश्विनीकुमार हैं। तूने जो काम किया, वही करने के लिए हम दोनों कव से घात लगाए रेत में पड़े थे।"

मनु खड़ा हो गया। बोला, "यह सब क्या है ? कैसा रहस्य है यह ?"

"हम भी नहीं जानते। पर इस रहस्य को भेदना ही होगा। हम कल से ही यह सब देख रहे हैं !"

"कल से ही ?"

"हां, कल ही आर्या गाता ने वताया था कि वह रोज ही ऐसा काण्ड देखती है, पर भयवश चुप पड़ी रहती है। इसे प्रेत-लीला समझकर वह डरती थी और इसी कारण वीमार भी पड़ गई है। हमने आज इसका भेद खोलने का निश्चय कर

लिया था। अब खुला ही समझ। एक प्रेत तो तूने पकड़ ही लिया है...हट, हम उसे पाश में बांध लेते हैं!"

अश्विनीकुमारों ने दास को जकड़कर बांध लिया, फिर उसे घसीटते हुए बोले, "आ, चल। पहले इसे अपने यहां ले चलेंगे।"

मनु उनके पीछे-पीछे चल पड़ा।



उस रात देवलोक में अजीब-सा सन्नाटा छाया रहा। ऐसा लगता था कि जीवन की गति कहीं एकाएक टूट गई है। इधर कई दिनों से अन्न का अभाव होने के कारण देवलोक में वैसे ही हलचल मची हुई थी। इन्द्र के आतंक के कारण यह हलचल अभी तक झोपड़ियों के भीतर या निर्जन स्थानों तक ही फुसफुसाहट बनकर रह गई थी, विद्रोह नहीं हो पाया था, पर किसी भी दिन इस सुलगती हुई आग से लपटें फूट सकती थीं।

अश्विनीकुमारों के घर के बाहर दुनिया भर की जड़ी-बूटियां लगी थीं। निकट ही केतकी का बड़ा-सा झाड़ था। उसकी गंध से मन को इस समय शान्ति से अधिक बेचैनी ही हुई। मनु ने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि देवों की अमरावती असुरों के भयानक षड्यन्त्र के चंगुल में छटपटा रही है। किसी भी क्षण विस्फोट होगा और त्वष्टा के हाथों से

निर्मित इन्द्र के भव्य राजभवन वैजयन्त का एक-एक कण बिखर-कर रेत में मिल जाएगा।

थककर मनु धरती पर यों ही पसर गया। वह बन्दी असुर दास से सब कुछ सुन चुका था, तभी से उसको ऐसा लग रहा था कि देव गण ने सब कुछ खो दिया है। कुछ भी बचाकर रखने की शक्ति उसमें नहीं रह गई है।

अपने कन्धे पर पड़े हुए विशाल धनुष को छूते ही मनु को पता नहीं कितना बल अपने खून में दौड़ता-सा लगता था। उस समय उसे किसी भी सहायक की आवश्यकता नहीं होती थी। भीषण से भीषण युद्ध में अपना रथ संभाले हुए मनु पलक झपकते कितने ही असुरों को धराशायी कर सकता था।

उस बार नमुचि के साथ लड़ते समय वह और खेल ऋषि की पत्नी विश्पला अकेले ही असुरों के व्यूह में फंस गए थे। नमुचि पूरे वेग से विश्पला पर आक्रमण कर रहा था। सोचा होगा, एक साधारण-सी स्त्री को रास्ते से हटाते देर ही कितनी लगेगी, पर विश्पला ने नमुचि की गदा को एक ही वार में काटते हुए ललकारकर कहा था, "मनु, तू मेरी ओर से निश्चिन्त हो जा। बलशाली सेनापति नमुचि को मैं एक पग भी आगे नही बढ़ने दूंगी। तू जाकर देख, कहीं इन्द्र संकट में न हो।"

मनु की भुजाएं वह दृश्य याद करके फड़क उठती हैं। उस दिन उसका रथ रणभूमि में इतनी तेजी से नाच रहा था कि लगता था, देवी उषा का रथ भी पीछे छूट जाएगा। तेजी से बाण चलाता हुआ असुरों की सेना को चीरकर वह पश्चिमी द्वार की ओर इन्द्र की सहायता के लिए बढ़ गया था।

पर इन्द्र तो कहीं भी दिखाई नहीं पड़ता था। मनु की छाती जोर से धड़क उठी। देव और असुर योद्धा भयानक

कर रहे थे, पर इन्द्र कहां गया ? देखा जाएगा। इन्द्र के
व होने की वात देवों को नहीं मालूम होनी चाहिए, नहीं
भगदड़ मच जाएगी। फिर असुरों से जान बचाकर देवलोक
रहना भी असम्भव हो जाएगा।

"महावली इन्द्र की जय हो !" पूरे जोर से चिल्लाकर मनु
रथ आगे बढ़ा दिया। पता नहीं कितने असुर उसके पहियों
ी घरघराहट सुनकर हटते, इसके पहले ही रथ उन्हें कुचल
ता और वायुमण्डल में चीख पर चीख थरथरा उठती। मनु
के देखते ही जैसे देवों का उत्साह दूना हो गया था; युद्ध और
भी भयानक हो उठा।

रथ को चारों ओर नचाता हुआ मनु राजा इन्द्र को खोज
रहा था, नीचे कुचले जाते असुरों के कारण उसका रथ उछल-
उछल पड़ता, पर घोड़ों की रास संभाले हुए मनु अडिग खड़ा
रहा। उसके चेहरे पर, आंखों में—सारे शरीर पर तेज-सा छा
गया था। आज यदि इन्द्र नहीं मिला तो मनु धरती से देवाधि-
देव वरुण के असुरों का नाम-निशान तक मिटा देगा।

सहसा कोई पीछे से चिल्ला पड़ा, "मनु ! रक्षा कर !"

"अग्नि !" मनु चिल्लाया और दूसरे ही क्षण उसका रथ
असुरों के बीच घटा में बिजली की तेजी से लपलपाकर बाईं
ओर घूम पड़ा। ठीक उसी समय बहुत तेज गड़गड़ाहट हुई और
देखते ही देखते असुरों के गढ़ का एक भाग धरती पर बिखर
गया। मुड़कर मनु उस ओर देखता ही रह गया। अग्नि का
रथ ठीक उसके रथ के पास आ लगा, उसके कंधे पर हाथ रख-
कर अग्नि मुस्कराया, बोला, "अगर तेरा रथ वहां एक पल भी
और रह जाता तो इसी गढ़ में तेरी समाधि बन जाती। इसी-
लिए मैंने रक्षा के बहाने चिल्लाकर तुझे बुला लिया था !"

बोलने का अवकाश नहीं था। एक बार धीरे से अग्नि क

हाथ दबाकर मनु ने कृतज्ञता प्रकट की, साथ ही पूछ बैठा. "इन्द्र कहां है ?"

एकदम पास ही सहसा इन्द्र का शंख बजा और सब ने एक साथ देखा, धूल के बादलों में किसी चट्टान की तरह अडिग खड़ा इन्द्र शंख बजा रहा था। मनु को प्रतीत हुआ कि पूर्वज ऋषियों ने कभी ठीक इसी प्रकार धुएं की लहरों में लिपटे यज्ञपुरुष का दर्शन किया होगा।

"इन्द्र, विजेता इन्द्र महान है।" अग्नि और मनु एक साथ बोल पड़े। रथ से उतरकर अग्नि ने अपने रथ पर रखा तांबे का पात्र उठा लिया और मनु के साथ इन्द्र के पास जा खड़ा हुआ। बोला, "हे इन्द्र, तेरी गदा के आघात से असुरों के पुर ढह जाते हैं..."

मनु ने साथ ही कहा, "तेरे शंख की ध्वनि सुनते ही असुरों के कलेजे फट जाते हैं। तेरे प्रताप से धरती असुरों को अपनी गोद में छिपा लेती है !

"तू पुरन्दर है। जिस प्रकार तू कई रातों तक केवल वायु पीकर बलशाली बना रहता है और असुरों का नाश करता है, उसी प्रकार, हे पराक्रमी इन्द्र, तू मेरे हाथ से यह सोमरस ग्रहण करके पी और हमारे दुखों को नष्ट कर।"

तांबे का पात्र हाथ में लेकर इन्द्र सोमरस पीने लगा। पूर्व की ओर हाहाकार बढ़ गया था। काठ के ढांचों में जड़ी हुई खालों पर तेजी से थाप पड़ने लगी। मारू बाजे की घरघराहट सहसा तेज पड़ गई। मनु चौंक पड़ा। इन्द्र को प्रणाम करके रथ पर चढ़ता हुआ बोला, "विश्पला अकेली ही नमुचि से लड़ रही है।"

इन्द्र और अग्नि को वहीं छोड़कर वह रथ के घोड़ों को तेजी से दौड़ता हुआ फिर पूर्व की ओर बढ़ चला। रास दांतों

के बीच संभालकर उसने धनुष उतार लिया था। बाईं ओर से असुरों की एक टुकड़ी ने आक्रमण करके उसे रोकना चाहा था, पर सावधानी से रथ नचाकर मनु एकदम उनके दाईं ओर चला गया। असुरों ने उसे तिरछे वार करते देखकर तुरन्त व्यूह-रचना बदलने की चेष्टा की। पीछे से असुरों की चिल्लाहट सुनकर मनु ने मुड़ते ही देखा कि विश्पला चारों ओर से घिरी हुई प्रचण्ड वेग से युद्ध कर रही है। मनु किसी प्रकार इस घेरे को तोड़कर उसके पास पहुंचना चाहता था। वह और भी तेजी से लड़ने लगा। पर असुरों की संख्या अपार थी। एक के गिरते ही, उसकी जगह दो पहुंच जाते। मनु उस समय अपने रथ को बवंडर की तरह वेग से नचाकर विश्पला के पास पहुंचना चाहता था।

पश्चिम की ओर से इन्द्र की प्रचण्ड शंख-ध्वनि सुनाई पड़ी, साथ ही अग्नि ने जयजयकार किया। मनु ने चिल्लाकर कहा, "देवी विश्पला, मैं आ गया हूं। इन्द्र और अग्नि भी आ रहे हैं..."

उसे लगा, जैसे विश्पला की थकती बांहों में फिर से शक्ति लहरा उठी। पर अब कुछ ही क्षण और हैं—यदि उसके पास पहुंचा न जा सका तो सब कुछ व्यर्थ हो जाएगा।

उसके धनुष की टंकार के साथ-साथ वर्षा की तीखी बूंदों की तरह बाण बरसने लगे थे और साथ ही उसका तेजी से नाचता रथ शत्रुओं को कुचल रहा था।

सहसा मनु ने दाएं हाथ में रास संभाली, फिर पता नहीं क्या हुआ, बिजली-सी चमकी और दूसरे ही क्षण मनु असुरों का घेरा तोड़कर विश्पला के निकट पहुंच गया। इसके साथ ही एक भयानक चीख वातावरण में थरथरा उठी। उसकी झनकार मनु की शिराओं में टकरा-टकराकर बजती रह गई।

उसने मुड़कर देखा—विश्पला की जांघ कटकर धरती पर गिर पड़ी, साथ ही वह भी घोड़े की पीठ से नीचे आ गई। दूसरे ही क्षण असुर बढ़कर उसे रौंद डालेंगे...पर मनु के जीवित रहते नहीं !

मनु ने धनुष-बाण फेंककर गदा उठा ली और रास बाएं हाथ में संभालकर बीच में पड़ी विश्पला की परिक्रमा-सी करने लगा। असुरों का क्रोध बढ़ गया था। उन्हें जैसे विश्पला के शव को कुचलने की हठ हो गई थी और मनु को बचाने की। वह चारों ओर चक्कर काट-काटकर गदा से असुरों पर आघात करने लगा। उसका रथ पूर्व-पश्चिम उत्तर-दक्षिण हर दिशा में दिखाई पड़ रहा था। किसी को पल भर का भी अवकाश नहीं मिलता था कि बढ़कर विश्पला को छू भी सके। जो मनु के रथ के पहियों से बच जाता, उसका सिर मनु की गदा से चूर-चूर हो जाता।

फिर भी असुर पीछे नहीं हटे। उत्तर और दक्षिण से पहुंचकर असुरों की दो टुकड़ियों ने इन्द्र और अग्नि को बीच में ही रोक लिया था। मनु अकेला कब तक विश्पला की रक्षा करता रहेगा ? जब तक मनु की एक शिरा में भी प्राण रहेगा...

सहसा नासत्य और दस्र की ललकार सुनकर मनु को चेत आया। वे पूर्व की ओर से मनु और विश्पला को घेरे हुए असुरों पर टूट पड़े। विवश होकर उनसे प्राण बचाने के लिए असुरों को घेरा तोड़कर उस ओर मुड़ना ही पड़ा।

बस, मनु को अवकाश मिल गया था। उसे केवल पश्चिम की ओर घेरकर खड़े असुरों को संभालना था। वह बिना देर लगाए उन पर रथ दौड़ाने लगा। धनुष की प्रत्यंचा को कान तक चढ़ाकर छोड़े गए उसके बाण एक सैनिक की छाती चीरकर दूसरे के शरीर में जा धंसते।



थोड़ी ही देर बाद चारों ओर देवों के शंखों की तेज ध्वनि गूंजने लगी थी। असुरों के चेहरों पर आतंक छा गया था। मारू बाजे की ढम-ढक ...ढम-ढक तथा शंखों का गर्जन बढ़ता ही गया; और सहसा शत्रुओं में भगदड़ मच गई। असुरों को जिधर से भी राह मिली, वे जान बचाकर भाग निकले। जो देवों के घेरे में फंस गए थे, उन्होंने शस्त्र फेंककर घुटने टेक दिए। देवों ने शस्त्र चलाना बन्द कर दिया। दासों का लाभ वे खूब समझने लगे थे। युद्ध में निःशस्त्र व्यक्ति को मारना कायरता का लक्षण माना जाने लगा था। इन्द्र की आज्ञा थी कि असुर जातियों के शक्तिशाली सैनिकों को बन्दी करके गण में दास बना देना चाहिए। केवल उन्हीं व्यक्तियों का वध कर देना चाहिए जो राजा या नेता हों। उनके जीवित रहने पर विद्रोह हो सकता है।

युद्ध बन्द होते ही मनु ने विश्पला को उठाकर रथ पर रख लिया। उसकी कटी जांघ देखकर सन्नाटा-सा छा गया। इन्द्र की आंखों में आंसू आ गए। बोला, "मुझे नमुचि के जीवित बच जाने का उतना दुख नहीं, जितना देवी विश्पला की जंघा कट जाने का!"

मनु ने दोनों हाथों में माथा दबाकर रथ के पहिए के सहारे निढाल पड़ते हुए कहा, "मेरी आंखों के सामने ही यह सब हो गया, पर मैं रक्षा नहीं कर सका। मुझे धिक्कार है!"

विश्पला ने धीरे से आंखें खोल दीं। बोली, "मनु, तेरे ही कारण मैं बची हूं। तू न होता, तो आज असुर मेरे शव को पिशाच जाति के बर्बर योद्धाओं की तरह कच्चा ही चबा जाते! पर मेरे प्राण बचाकर ही तूने..."

मनु उसका आशय समझ गया। उसने आवेश में इन्द्र के कन्धे पकड़कर कहा, "राजा...इन्द्र, अब क्या होगा! जब खेल

हर्षि सुनेंगे कि मनु वहीं था और देवी विश्पला की जंघा असुरों ने काट दी, तब ? मैं क्या उत्तर दूंगा उन्हें !"

अग्नि ने समझाया, "मनु, तू अधीर मत हो। यहीं इन्द्र भी था, मैं भी था, दस्र और नासत्य भी थे, पर कितने ही देवों के प्राण नहीं बचा सके। वह देख, असुरों की तांबे जैसी देह के साथ-साथ कितने ही देवों के सोने जैसे शरीर भी निर्जीव पड़े हैं..."

"मनु, तूने मुझे भी क्यों नहीं मर जाने दिया..." विश्पला कराह उठी।

मनु रो पड़ा।

दस्र और नासत्य विश्पला के घावों को ध्यान से देख रहे थे। उन्होंने एकाएक मुड़कर रोते हुए मनु को देखा। दस्र बोला, "मनु, तू भी सूर्यपुत्र है, हम भी हैं। सहोदर न सही, फिर भी हम भाई हैं। तू चिन्ता मत कर, हम तुझे लज्जित नहीं होने देंगे !"

अश्विनीकुमारों ने इधर कितने ही चमत्कार किए थे, मनु को आशा-सी बंधी। पर इस स्थिति में वे करेंगे ही क्या ?

नासत्य ने कहा, "अभी नहीं। करने के बाद ही तू देखेगा ! चल, तू हमारा छोटा भाई है। तेरे प्रताप से हमारा मस्तक गर्व से ऊंचा हो गया है, राजा तुझे वरदेगा !"

इन्द्र होंठों को दांतों से दबाकर रथ पर कुहनी टिकाए खड़ा एकटक विश्पला की ओर देखता रहा।

और उसके पश्चात एक मास भी नहीं बीता था कि सह[illegible] इन्द्र-सभा में पहुंचकर अश्विनीकुमारों ने एकाएक स्तुति [illegible] "इन्द्र तेरे तेज से दसों दिशाएं प्रकाशित हैं ! तेरे बल[illegible] धरती का कण-कण चेतन है। एक देवी तेरा दर्शन क[illegible]

चाहती है!"

इन्द्र की अनुमति पाकर दस्र ने संकेत किया और दूसरे ही क्षण एक नारी भीतर आई। इन्द्र चकित होकर बोला, "विश्पला!"

"देवी!" मनु आश्चर्य से चिल्ला पड़ा था। विश्पला के दोनों पैर ठीक थे। वह अपने पति खेल ऋषि का सहारा लिए धीरे-धीरे अपने ही पैरों से चलती हुई भीतर आ रही थी। मनु को अपनी आंखों पर विश्वास नहीं हुआ। वह अपने आसन से उठकर विश्पला के निकट जा खड़ा हुआ।

खेल ऋषि ने उसकी प्रशंसा करते हुए कहा, "मनु, मैं तेरा ऋणी हूं, तूने विश्पला की प्राण-रक्षा में जैसा पराक्रम दिखाया है, उसका कोई उदाहरण नहीं मिलता। फिर मैं अश्विनी-कुमारों का ऋणी हूं, जिन्होंने विश्पला को लोहे की जंघा दी है। फिर मैं राजा का ऋणी हूं, जो अपनी प्रजा को पुत्रों की भांति चाहता है, जो हमारे सुख के लिए असुरों का नाश करता है।"

इन्द्र ने भरे गले से कहा था, "आज से अश्विनीकुमारों को पहले की ही तरह सम्मान के साथ यज्ञभाग दिया जाएगा। त्रिशिरा से कहो, इनके भाग भी दास पहुंचाया करेंगे..."

सहसा केतकी कुंज के पास सरसराहट-सी हुई। मनु चौंक पड़ा। उसने देखा, बाहर से रेंगता हुआ एक सांप आकर केतकी के झुरमुट में समा गया है। खिन्न-सी हंसी हंसकर वह उठा और धीरे-धीरे बाहर निकल गया। उसे लग रहा था, जैसे जांघें इतनी भारी हो गई हैं कि पैर उठाना कठिन हो गया है। जिन जांघों के बल से उसके घोड़े की हड्डियां चटख उठती हैं, आज उनमें बल जैसे रह ही नहीं गया। जिन

वांहों से वह प्रत्यंचा को कान तक खींचकर बाण छोड़ता है, उसमें अब धनुष को झुकाकर उस पर डोर भी चढ़ा सकने भर की शक्ति नहीं रह गई है ।

धीरे-धीरे चलता हुआ मनु नदी के तट पर पहुंचकर यों ही खड़ा हो गया । पूर्व दिशा में उषा की लाली छिटकी हुई थी । मन की अशान्ति से मनु को कहीं भी छुटकारा नहीं मिल रहा था । हाथ जोड़कर खड़ा वह देवी उषा की स्तुति करने लगा :

"हे कुमारी उषा, जिस प्रकार तू अपने रथ पर खड़ी होकर सातों अश्वों को एक ही कर से संचालित करती है, जिस प्रकार सूर्य की सहस-सहस किरणें तुझमें केन्द्रित हो जाती हैं, उसी प्रकार हमारे मन को भी एकाग्र कर...

"हे उषा, तू अन्धकार की छाती चीरकर प्रकाश को राह देती है । हमारे सामने छाए अन्धकार को भेदकर हमें मार्ग दे..."





६

मन्त्रोच्चारण रुक गया। कुण्ड से आग की ऊंची-ऊंची लपटें उठने लगी थीं। देवगण फिर धीरे-धीरे इधर-उधर की बातें करने लगे थे। त्रिशिरा से भाग बांटने का अनुरोध करके इन्द्र वहीं बैठे-बैठे देव सेनानायकों से बातें करने लगा। प्रायः ऐसा ही होता था। कितनी ही बार देव लोग यज्ञमण्डप में ही तरह-तरह के मेल खेलने लगते और कभी-कभी तो इन्द्र वहीं बैठे-बैठे सोमरस भी पीता था।

त्रिशिरा मण्डप के साथ ही बने भण्डार के बाहर पड़े आसन पर बैठकर भाग बांटने लगा। दास अभी तक भीतर नहीं आए थे। एक देवपुत्र को बुलाकर त्रिशिरा ने आज्ञा दी, "जाते समय तू दासों को इधर भेजता जा। मैं भाग बांट चुका हूं।"

देवपुत्र बाहर की ओर दौड़ा, पर दक्ष ने बीच ही में रोककर कहा, "जा, तू इधर जाकर खेल।"

"पुरोहित ने कहा है..."

"जो मैं कहता हूं, कर। दासों को बुलाने के लिए मैंने
सरे को भेजा है।"

देवपुत्र डरकर मण्डप के बाहर खेलते हुए देवपुत्रों में जा
मिला।

"ला, मेरा भाग दे दे, ब्राह्मणस्पति, दास पता नहीं कब
आएंगे।" एक वृद्ध देव पुरोहित के निकट जा खड़ा हुआ।

त्रिशिरा ने जरा खीझकर कहा, "ऐसी जल्दी क्या है।
जरा देर बैठ जा। भाग मैं बांट चुका हूं।"

"जल्दी नहीं है?" देव एकाएक कोपकर बोला, "कल से
पेट में अन्न का एक दाना तक नहीं गया है!"

"कल तुझे भाग नहीं मिला था, देव?" इन्द्र के पास बैठ-
कर किसी गम्भीर विषय पर बातें करते-करते अचानक मुड़कर
नासत्य ने कहा, "अन्न क्यों नहीं गया पेट में?"

देव सहमकर एक ओर खड़ा हो गया। इन्द्र की भौंहें तन
गईं। एक ओर बैठे अग्नि और मनु की दृष्टि एक-दूसरे से
मिली। दोनों ने ही सिर हिलाया। उन्होंने सावधानी से देखा,
पहले की निश्चित योजना के अनुसार दस्र मण्डप के द्वार पर
खड़ा था। उससे बचकर कोई भी उस ओर से निकलकर नहीं
जा सकता। मनु का संकेत पाते ही अग्नि बोल पड़ा, "तुझे
लज्जा नहीं आती इस प्रकार बोलते? महापराक्रमी इन्द्र
हमारा पालनकर्ता है। उसके होते कौन बिना अन्न खाए सो
सकता है!"

अब भी देव को कुछ बोलने का साहस नहीं हुआ। व
डरी हुई आंखों से चारों ओर इस प्रकार ताकने लगा जैसे कि
सहायक की खोज में हो। अग्नि की ललकार सुनकर अचान
चारों ओर सन्नाटा छा गया था। सब पथराए-से एकटक
राए हुए वृद्ध देव की ओर ताक रहे थे। किसी में भी सा

न था कि एक बार आंख उठाकर कोध से तमतमाए हुए अग्नि या इन्द्र की ओर ताक लेता।

बड़ी देर तक चुप्पी छाई रही। अन्त में इन्द्र का गम्भीर स्वर गूंज उठा, "देव, कल तू भूखा रहा ? क्यों ?"

"कहीं किसी चोर ने न लूट लिया हो।" किसी कोने से धीमी-सी आवाज आई।

दक्ष ने वहीं से कहा, "नहीं, पुर की रक्षा करने वाले योद्धाओं में से किसी ने भी कल रात का कोई ऐसा काण्ड नहीं बताया।"

"देव ! बताता क्यों नहीं ?" मनु अपनी जगह से उठकर देव के निकट आ खड़ा हुआ, बोला, "तू निर्भय हो। बता तुझे क्या कष्ट है ? कल तुझे भक्ष क्यों नहीं मिला ?"

कन्धे पर मनु के बलिष्ठ हाथों का स्पर्श पाकर जैसे देव का साहस बंधा। धीरे से बोला, "कल ही नहीं, आज चार-पांच मास से कितनी ही बार हमें भूखों सो जाना पड़ता है..."

मनु ने एक बार चारों ओर दृष्टि दौड़ाकर पूछा, "क्यों, ऐसा क्यों होता है ? तुझे यज्ञभाग नहीं मिलता ?"

"भाग मिलता है, पर पूरा नहीं पड़ता। वह देखो, उतना-सा भाग मिलता है, उससे किसका-किसका पेट भरूंगा ?"

सबकी आंखें त्रिशिरा द्वारा लगाए गए भागों पर टिक गईं। मनु ने एकाएक पूछा, "उतने से तेरा ही पेट नहीं भरता, और सबका क्यों भर जाता है ? हमारा भाग भी तो यहीं से मिलता है।"

देवों में से एक प्रौढ़ और उठकर उनके पास आ खड़ा हुआ, बोला, "आज प्राणों का मोह छोड़कर मैं भी कहूंगा। देवलोक की आधी प्रजा आधा पेट खाकर सोती है। तुम्हें, तथा अग्नि, नासत्य और दक्ष, इन जैसे लोगों को भाग अधिक

मिलता है, और शेष प्रजा को कम । तुम अपने पशुओं को भी अन्न देते हो, हम अपने बच्चों का भी पेट नहीं भर पाते ।"

सहसा त्रिशिरा चिल्ला पड़ा, "हां, तुम पशुओं से भी गए-बीते हो । तुम्हारा जितना अधिकार है, उतना ही मिलेगा । मैं



तुम्हें शाप दूंगा...तू..."

"इन्द्र, रक्षा कर...राजा, तू महान है..."

सहसा दोनों देव धरती पर पसरकर मस्तक रगड़ने लगे। इन्द्र ने दाईं भुजा उठाकर कहा, "सावधान पुरोहित...मैं इन्द्र, तेरे शाप का वर्जन करता हूं।"

"राजा!" त्रिशिरा चिढ़ गया। बोला, "तू मेरा अपमान करता है।"

इन्द्र ने त्रिशिरा की बात अनसुनी कर दी। वह उठकर आसन से नीचे उतरा और पास आकर भागों का निरीक्षण करने लगा। बोला, पुरोहित, कुछ भाग पांच-पांच गुना हैं



और कुछ बहुत ही छोटे। गण के हर व्यक्ति को समान भाग देने की व्यवस्था है। तूने यह भेद क्यों किया?"

त्रिशिरा ने रूखे स्वर से कहा, "राजा, भाग मैं बांटता हूं। मैं जानता हूं, जिनके बल से गण चलता है, उन्हें पूरा भाग

…ना ही चाहिए। शेष जितना बचेगा, उसी को बांटकर खाएंगे।

इन्द्र क्रोध से कांप उठा। बोला, "क्या कहता है तू? इसका अर्थ तो यह है कि देवलोक में आज भी अभाव है! मैंने सोचा था कि अब किसी दिन देवों की अन्न की समस्या दूर कर दूं, तो अमरावती अमरावती हो जाएगी, पर अभी तक प्रजा भूखों ही मर रही है! मुझे धिक्कार है। क्या मुझे इतना ही अन्न मिलता है?"

"जो कुछ है, मैं बांट देता हूं।" त्रिशिरा ने कुछ संकोच के साथ कहा।

"तो मुझमें और मेरे कायर पिता [illegible] में अन्तर नहीं। मैं उससे भी बड़ा अपराधी हूं। वह तो सब कुछ जानता था, मैं यह भी नहीं जानता कि मेरी प्रजा भूख से तड़पती है। मैं वैजयन्त भवन में इन्द्रासन पर बैठा अप्सराओं का नृत्य देखता हूं; नन्दन कानन में सुगन्धियों के समुद्र में तैरता हूं; और मेरी प्रजा भूख से तड़प-तड़पकर रात काटती है। अग्नि, वायु… तुम भी यह सब नहीं जानते… सब क्या है! अश्विनीकुमारो, …"

"हम जानते हैं, इन्द्र! आ तुझे भी दिखाएं।" … भण्डार के द्वार पर रखी शिला को अपनी बलिष्ठ भुजाओं से … ठेलकर एक ओर कर दिया, फिर बोला, "देख, यह … यह देख!"

त्रिशिरा आसन पर स्तब्ध बैठा रहा। इन्द्र ने भ… देखा, आधा भण्डार अन्न से ठसाठस भरा पड़ा था।

उसके मुड़ते ही त्रिशिरा ने कहा, "यह भण्डार … खाली नहीं होने देता। किसी भी दिन संकट आने पर … इसी से पेट भरना पड़ सकता है!"

"पर उसका भार तो राजा पर है!" अग्नि …

"इन्द्र के भण्डार में रखा अन्न प्रजा के लिए ही तो है ! फिर तू किस कारण प्रजा का पेट काटता है, ब्राह्मण ?" मनु गरज उठा।

"राजा के साथ-साथ पुरोहित का भी कर्तव्य है कि प्रजा की रक्षा का उपाय करे..." त्रिशिरा की जीभ लड़खड़ाने लगी।

इन्द्र ने बीच ही में कड़ककर कहा, "तो आज तक तू जो अन्न बचाता रहा, कहां है वह सब ?"

त्रिशिरा ने पल भर सोचकर कहा, "रोज इतना ही नहीं बचाता। बस आधा भण्डार सदा भरा रहता है..."

"तो यज्ञ के समय पूरा अन्न बंटता है, फिर भी प्रजा का पेट नहीं भरता ?"

"जो मिलता है, मैं देवों को ही तो देता हूं..."

"असत्य है !" मनु ने चिल्लाकर कहा, "इन्द्र, मैं बताता हूं तुझे। इस त्रिशिरा की माता असुरबाला है। उसी के संकेत पर हमारा पुरोहित रोज हमारा आधा भाग असुरों को देता है..."

"मनु !" त्रिशिरा क्रोध से कांपते हुए बोला, "तुझे मेरा शाप है..."

मनु ठहाका मारकर हंस पड़ा। बोला, "सावधान त्रिशिरा शाप देने के पहले इसे देख ले !"

वह झपटकर बाहर निकल गया और तुरन्त ही कल रात में पकड़े गए असुर बन्दी को लाकर त्रिशिरा के सामने ही इन्द्र के पैरों पर डाल दिया। बोला, "इस दास को पहचानता है तू ? इन्द्र, इस दास से पूछ कि देवों का पेट काटकर त्रिशिरा सारा अन्न कहां भेज देता है। देवों के श्रम का भाग ीं-रात नौका पर लदकर असुरों के ग्राम में चला जाता

"त्रिशिरा !" इन्द्र के गम्भीर, कठोर स्वर से जैसे चट्टानें भी कांप उठीं।

त्रिशिरा ने चकपकाकर चारों ओर देखा। उसकी आंखें फटी की फटी रह गईं। पता नहीं कब नासत्य, दस्र, अग्नि और मरुत् द्वार पर खड़े हो गए थे। नहीं, कोई मार्ग नहीं।

"तेरा नाश सच ही है। तेरे तीन शिर हैं, त्रिशिरा ! तेरे तीन मुख हैं। एक से तू यज्ञ की बलि ग्रहण करता है; दूसरे से सोम पीता है, और तीसरे से हम देवों की शक्ति पीता है ! नीच, तू देव नहीं, असुर है...सावधान !"

इन्द्र ने हाथ बढ़ाकर खड्ग उठा लिया।

"इन्द्र !" त्रिशिरा की फटी हुई आवाज मण्डप की दीवारों से टकरा-टकराकर सिर धुनने लगी, "तू देवों का पराक्रमी राजा है। तू ब्राह्मण की हत्या करेगा !"

"एक बार और सही !" इन्द्र ने दांत पीसकर उसकी ओर बढ़ते हुए कहा, "मैंने एक दिन प्रजा के लिए अपने पिता व्यंस का वध किया था...आज तेरा वध करूंगा..."

"इन्द्र !" यज्ञ को ठेलकर सहसा त्वष्टा चिल्लाता हुआ भीतर आया, "तुझे ब्रह्महत्या लगेगी। राजा..." उसके हाथों में सोमरस से भरा घट था।

एक कोने में बैठा व्याकुल पुरोहित बृहस्पति खड़ा होकर चिल्ला पड़ा, "इन्द्र, सावधान ! यह ब्रह्म का अपमान होगा... पुरोहित की हत्या अनाचार है...ब्राह्मण के बिना देवों का नाश हो जाएगा..."

"यह ब्राह्मण नहीं है...त्रिशिरा के कर्म ब्राह्मण के नहीं हैं !" इन्द्र का खड्ग आकाश में चमका और दूसरे ही पल त्रिशिरा का सिर कटकर धरती पर लुढ़क गया। तब भी उसका खून से लथपथ धड़ उठकर कई पग इधर-उधर भागा,

फिर अपने पिता त्वष्टा के पैरों के पास गिर पड़ा।

इन्द्र के ठहाके से जैसे आकाश कांपने लगा। उसने पुकारकर कहा, "ला, त्वष्टा, सोमरस दे। मुझे प्यास लगी है!"

बृहस्पति ने चिल्लाकर कहा, "नहीं, देवो, सावधान। इन्द्र नीचकर्मा है, अनाचारी है, सोम का अधिकारी नहीं!"

यज्ञशाला में घोर सन्नाटा छाया रहा, किसी ओर से एक भी शब्द नहीं सुनाई पड़ा। इन्द्र और बृहस्पति एक-दूसरे के सामने विशाल चट्टानों की भांति अडिग खड़े थे। उनके तेजपूर्ण नेत्र एक-दूसरे का मर्म भेद रहे थे। कोई भी नत होता नहीं दीखा।

रूखे, कठोर स्वर से इन्द्र ने घोषणा-सी की, "मैं गणपति हूं!"

"मैं ब्राह्मण हूं।" बृहस्पति ने उसी स्वर में उत्तर दिया।

"गणपति अपराधी को दण्ड देगा!"

"ब्राह्मण की व्यवस्था से ब्रह्म जीवित है! गणपति ब्राह्मण से श्रेष्ठ नहीं!"

बृहस्पति ने यज्ञशाला में बैठे देवों पर दृष्टि डाली। उसे लगा कि हर दृष्टि उसका समर्थन कर रही है, पर होंठ इन्द्र के आतंक से बन्द हैं। उसने जोर से कहा, "गणपति ब्रह्म से श्रेष्ठ नहीं है। इन्द्र, तू अनाचारी है! समाज का तिरस्कार करता है!"

"मैं शक्तिशाली हूं! शक्ति ही श्रेष्ठ है!"

"तू दम्भी है! सोम का भाग पाने योग्य नहीं!"

"गण मेरे आदेश से चलेगा!" इन्द्र गरज उठा।

"तो ब्रह्म की परम्परा समाप्त हो जाएगी। मैं पितरों के नाम पर मर्यादा देता हूं...ब्रह्म न्याय करे! इन्द्र आज से..

"बृहस्पति...ठहर! मुझे पूछ लेने दे। कहीं मुझे मर्यादा और शाप का भी वर्जन न करना पड़े।"

इन्द्र के विशाल पीले नेत्रों की लाली और बढ़ गई। उसने अपने दाएं हाथ की ओर देखा, खड्ग से अब भी त्रिशिरा का गरम खून टपक रहा था। उसने गरजकर कहा, "अग्नि... मनु...नासत्य...क्या तुम भी सोमरस मुझे नहीं दोगे ?"

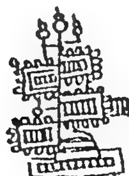
युवक देव सिर झुकाए खड़े रहे। बृहस्पति के साथ ही उस ओर बैठे देवों ने उत्तेजना से कांपते हुए कहा, "नहीं, नहीं... इन्द्र सोम का अधिकारी नहीं है!"

इन्द्र एक बार आग्नेय दृष्टि से चारों ओर देखकर गरज उठा, "तो मैं, द्यौस का पुत्र इन्द्र, सोमपान करता हूं... जिसमें शक्ति हो, रोके..."

उसने बांया हाथ बढ़ाकर त्वष्टा के हाथ से घट छीन लिया और गट-गट सोम पी गया। इस बीच उसकी दाईं भुजा उठी रही और खड्ग से खून की बूंदें टपकती रहीं।

त्वष्टा पुत्र के शव से लिपटकर चीखने लगा।

सोम पीने के बाद खड्ग एक ओर फेंककर इन्द्र भारी-भारी डग रखता हुआ बाहर निकल गया।





१०

⊙○⊙

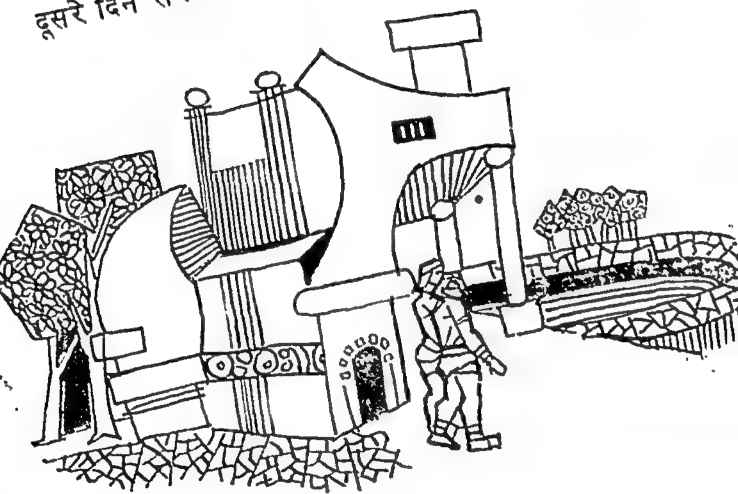
असुर खुलकर शत्रुता पर उतर आए। अब तक रोज छोटे-मोटे झगड़े चलते रहते थे, कभी-कभी युद्ध भी हो जाता था, पर बहुत-सी बातों में वे मिलजुलकर रहते। व्यापार, और विशेषकर समुद्र पार के देशों से व्यापार करने में असुर और देव जाति का साथ रहता था। कितनी ही बार उन्हें पश्चिम में मिस्र देश के योद्धाओं, और पणियों से लड़ना पड़ जाता। उनसे अपनी सम्पत्ति बचाने में वे एक-दूसरे का साथ देते थे। पर अब वह सब बन्द हो गया। देव और असुर जातियां जहां भी थीं, वहीं उनकी लड़ाई ठन गई।

अपने पुत्र का वध होने के कारण त्वष्टा राजा इन्द्र से रुष्ट हो गया। पुत्र के शोक में वह कल रात भर नदी की रेत में छटपटाता-लोटता रहा। वह बार-बार चिल्ला पड़ता, "त्रिशिरा, तू कायर है। तू बैठा देखता क्यों रहा? [illegible] इस कृतघ्न इन्द्र का वध क्यों नहीं कर दिया!"

इन्द्र ने भी अपने भवन के निकट खड़े होकर उसका प्रलाप
था। पास ही खड़े अग्नि ने अपना धनुष संभाला, पर इन्द्र
धीरे से कहा, "नहीं अग्नि, उसे जाने दे। त्रिशिरा के शोक
वह पागल हो गया है।"

फिर उसी रात त्वष्टा पता नहीं कहां चला गया था।

दूसरे दिन सवेरे ही देवों के अनेक योद्धा और सेनापति



राजा इन्द्र का दर्शन करने आए।

इन्द्र ने उनकी ओर उपेक्षा से देखकर कहा, "अब इन्
क्या लेना है? इन्द्र सोम से वंचित है न! जाओ, और
चुन लो!"

कल की घटना से सभी डर गए थे। किसी में इन्द्र से
मिलाने का साहस नहीं रह गया था। शची भी उसके
डर रही थी। वे बड़ी देर तक इन्द्र की स्तुति क

इन्द्र के बिना देव गण नष्ट हो जाएगा...इन्द्र ही उनकी रक्षा कर सकता है...

अन्त में इन्द्र मान गया। उसने शची को खींचकर इन्द्रासन पर बैठा लिया। और देवों के लिए भी आसन आ गए।



उन्होंने विस्मय के साथ देखा, इन्द्र का तेज आज बुझा-बुझा जान पड़ता था। पलकों तले कालिमा छा गई थी और नेत्र प्रश्नात्मक ढंग से ताक रहे थे। इन्द्र की नीली आँखों की लाली उसके तेज और मुस्कान की प्रतीक थी, पर आज कुछ और ही लगा।

"राजा शायद रात भर सोया नहीं।" रुद्र फुसफुसाया।

मनु सिर हिलाकर रह गया। उसने कितनी ही बार इन्द्र को रात-रात भर जागकर असुरों से युद्ध करते देखा है, पर ऐसा तो कभी नहीं हुआ था! इन्द्र का चेहरा कभी इतना चिन्तित और संकटग्रस्त-सा नहीं दिखाई पड़ा।

इन्द्र ने धीमे स्वर में पूछा, "त्वष्टा का कुछ पता चला?"

नारद ने बताया, "नहीं। रात को वह नदी पार करके असुरों की ओर चला गया...एक दूत ने बताया है कि वह..."

"क्या बताया है?" इन्द्र के चेहरे पर ऐसी चिन्तातुर उत्सुकता भी तो कभी नहीं दिखाई पड़ती थी!

कुछ हिचककर नासत्य ने कहा, "वही, त्वष्टा प्रलाप कर रहा था...त्रिशिरा...मैं प्रतिशोध लूंगा। तू अन्तरिक्ष में ठिठककर देवाधिदेव वरुण असुर की आंखों से देख, मैं इन्द्र के वध के लिए महायज्ञ करूंगा! आज से उलटे मन्त्र पढ़ूंगा..."

इन्द्र सहसा उठ खड़ा हुआ। देवताओं की आंखें उसे देखकर आश्चर्य से फैल-सी गईं। इन्द्र झेंप गया। फिर बैठते हुए बोला, "हमें सावधान रहना चाहिए!"

अग्नि ने दर्प से कहा, "उस बूढ़े त्वष्टा के कारण ऐसी कौन-सी विपत्ति आ जाएगी, राजा!" उसे आश्चर्य हुआ। कल यही इन्द्र तो था, जो सारे देवों की उपेक्षा करके सोम छीनकर पी गया था। फिर आज यह क्या हो गया है उसे?

"नहीं।" इन्द्र ने सिर हिलाया, "त्वष्टा साधारण नहीं है। हमें सतर्क रहना चाहिए।"

"इन्द्र का तेज ब्रह्महत्या के कारण क्षीण हो गया है!" इन्द्र-सभा में बैठे एक देव ने करुण स्वर में कहा, "तुम सब देवों को मिलकर इन्द्र की रक्षा करनी चाहिए..."

"हा...हा...हा..." इन्द्र जोर से हंसा, पर उसकी आवाज में आज वह बल नहीं था। बोला, "इन्द्र की रक्षा नहीं, देव गण की रक्षा की बात सोचो! त्वष्टा का महायज्ञ हमारे नाश के लिए होगा। इस नगरी को त्वष्टा ने ही बनाया है। हम लोगों के पता नहीं कितने रहस्य वह जानता है। उसे यह भी मालूम है कि हम लोग नदी के किस भाग से अपने जलकुण्डों को भरते हैं। यह सब बहुत भयंकर है। त्वष्टा हम पर किसी भी समय संकट ढा सकता है"

देव सिर झुकाए बैठे रह गए। इन्द्र सच ही तो कहता उसकी चिन्ता अनुचित नहीं।

"आज से हमारा पुरोहित कौन होगा! भाग क

बांटेगा ?" इन्द्र ने सहसा पूछा, "बिना पुरोहित के यज्ञ रुक जाएगा। हमारा पतन होगा..."

सन्नाटा छाया रहा, सचमुच बिना पुरोहित के शासन कैसे चलेगा ?

मनु ने कहा, "ऐसा एक ही व्यक्ति है, इन्द्र ! आंगिरस बृहस्पति ! इस संकट में वही देवों की रक्षा कर सकता है !"

"बृहस्पति !" इन्द्र चौंक उठा, "पर वह तो..."

"और किसी पर भी विश्वास नहीं किया जा सकता। ज्ञान, शक्ति, और बुद्धि सब में वह श्रेष्ठ है। असुरों के सबसे बड़े पुरोहित उशना शुक्र से निबटना भी अकेले उसी का काम है। और उससे बढ़कर देवों का विश्वासपात्र भी तो कोई नहीं। तूने उसका पद छीनकर त्रिशिरा को दे दिया था, फिर भी वह मन्त्रों की रचना करता है और देवों के हित में ही लगा रहता है..."

इन्द्र ने सिर हिलाकर स्वीकार किया। पर सन्देह भरे स्वर में बोला, "किन्तु वह मानेगा ?"

मनु ने कहा, "वह तुमसे रुष्ट है, देव जाति से नहीं। अपनी बुद्धि और तेज के बल से वह जब चाहता, त्रिशिरा से अपना पद छीन सकता था। प्रजा उसके एक संकेत पर उसके साथ खड़ी हो जाती, पर वह धीर-गम्भीर है। उसमें स्वार्थ नहीं, मोह भी नहीं है। वह देवों का हितैषी है। यदि तू कहेगा तो वह तुरन्त स्वीकार कर लेगा !"

इन्द्र संकोच के साथ बोला, "पर उसके पास जाकर कहते पता नहीं कैसा लगता है..."

"देवों के हित के लिए तूने अपने पिता का वध तक किया था, इन्द्र !" दक्ष बोल पड़ा, "आज उसी के लिए ब्राह्मण के सामने सिर झुकाते लजा रहा है ! तू जिस क्षण भी चाहे,

बृहस्पति का अस्तित्व मिट्टी में मिल सकता है। तेरी इच्छा के कारण ही तेरा शत्रु होते हुए भी वह जीवित है। तू ही उसका रक्षक है। तू चाहता तो त्रिशिरा की तरह उसका भी वध कर सकता था, फिर उसे प्रणाम करने में तेरा गौरव ही तो है..."

इन्द्र ने खिन्न हंसी हंसकर कहा, "अच्छा, मैं तत्पर हूं। चल..."

"नहीं इन्द्र, तुझे जाना नहीं पड़ेगा! मैं स्वयं आ गया हूं।" द्वार से बृहस्पति ने प्रवेश करके कहा, "तेरे पराक्रम से देव सुखी हैं, तेरे कारण प्रजा का वैभव बढ़ रहा है। इससे बढ़कर कामना मुझे और क्या हो सकती है। तूने अपने को सुरनायक सिद्ध कर दिया है। आज असुर तेरे विरुद्ध संगठित होकर खड़े हैं। मैं भी इसी कारण स्वयं चला आया हूं! मैं तुझे राजा मानकर तेरा अभिषेक करता हूं। मैं तेरा पुरोहित बनूंगा!"

"आचार्य!" इन्द्र दौड़कर उसके चरणों पर गिर पड़ा।

"हां इन्द्र! तेरे बिना देवों का नेता कौन होगा। त्वष्टा तेरे नाश के लिए यज्ञ कर रहा है। मैं तेरी रक्षा के लिए यज्ञ करूंगा!"

सारी देव सभा ने हर्ष से चिल्लाकर बृहस्पति का अभिवादन किया। इन्द्र ने अपने हाथों से बृहस्पति के लिए पुरोहित का आसन रखकर उसे बैठाते हुए कहा, "तब मुझे कोई चिन्ता नहीं। आज मैं असुरों से अधिक बलशाली हुआ..."

कई मास बीत गए।

एक दिन राजा तुग्र का पुत्र व्यापारी नाविक भुज्यु यात्रा से लौटकर अमरावती आया। उसने कुछ गम्भीर सूचनाएं दीं। "त्वष्टा पागल नहीं था। वह सचमुच प्रतिशोध के लिए भयानक प्रयास में जुट गया है। उसने रात-दिन एक करके असुर बल

वृसय के पुत्र असुर वृत्र को खोज निकाला। वृत्र की भुजाओं मे इतनी शक्ति है कि वह अपने से कई गुना भारी चट्टान उठाकर पर्वत के ऊंचे-ऊंचे शिखरों पर दौड़ता हुआ चढ़ जाता है। पल भर भी रुके बिना त्वष्टा उसे अथक परिश्रम करके युद्ध-विद्या में पारंगत कर रहा है। उसने पता नही कौन-सी औषधि खोज निकाली है, जिसका प्रयोग करके वह वृत्र के शरीर को ऐसा बनाए दे रहा है कि उसकी देह पर किसी शस्त्र से कोई घाव ही नही होता!"

"असम्भव!" अग्नि ने हसकर नासत्य की ओर देखा। बोला, "सुनते हो, नासत्य, ऐसा भी कही हो सकता है कि हाड़-मांस पर शस्त्रों से घाव ही न लगें!"

नासत्य ने गम्भीर होकर कहा, "कुछ भी असम्भव नही है अग्नि! तुमने सुना नही है, नमुचि के शरीर पर भी तो किसी भी शस्त्र से घाव नही होता। उसे बस, ऐसे ही शस्त्र से मारा जा सकता है जो न गीला हो, न सूखे पदार्थ का। ऐसा क्या हो सकता है भला! इस कारण नमुचि अमर ही हो गया है न! पिछले युद्ध में भी वह बच ही निकला।"

"वृत्रासुर को देखा तूने?" इन्द्र पूछ बैठा।

"नही। पर उसके अपार बल का गर्व हर असुर को है। कहते हैं, त्वष्टा ने वृत्र से इन्द्र की हत्या करने का वचन लेकर उसे असुरों की संगठित सेना का प्रधान सेनापति भी बनवा दिया है।"

"उस किशोर को!" इन्द्र हंसा, "तब हो चुका

भुज्यु ने सिर झुकाकर कहा, "उसकी उपेक्षा नही की जा सकती, राजा! मैंने उसकी उखाड़ी हुई एक शिला देखी है। और नदी के तट पर ही उसने अपनी भुजाओं से [illegible] पेड़ उखाड़ फेंका है, उसे भी देखता आ रहा हूं

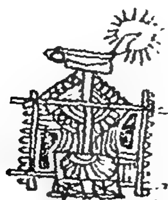
एकाएक जोर से हाहाकार सुनाई पड़ा। कितने ही नारी, बालक और पुरुष कण्ठों से 'रक्षा करो, रक्षा करो' का आर्त्त-नाद सुनाई देने लगा। इन्द्र के साथ ही सारे देव योद्धा खड़े हो गए।

"असुरों का आक्रमण हो गया!" मनु चिल्लाया और बाहर की ओर भाग चला। पीछे-पीछे योद्धा भी दौड़ते हुए निकल गए। इन्द्र अपनी भारी-भरकम गदा उठाकर बोला, "मैं देखता हूं! शची, सावधान!"

उसके चलने से पृथ्वी जैसे धमक उठी। बाहर आते ही मातलि उसका रथ लिए मिला। इन्द्र के रथ पर चढ़ते ही घोड़े हवा की तरह दौड़ चले।

हाहाकार बढ़ता ही जा रहा था...

थोड़ी ही देर बाद भयंकर मारू बाजे बजने लगे। शंखों और शृंगों की भीषण ध्वनि से वायुमण्डल थर्रा उठा। बालकों, वृद्धों और स्त्रियों की चीख-पुकार के साथ योद्धाओं की हुंकार और पशुओं की चिंघाड़ मिल जाने के कारण ऐसा लग रहा था मानो महाविनाश सिर पर मंडराने लगा हो। थोड़ी ही देर में सारा देवलोक धूल, आग की लपटों और खून की बौछारों में खो गया। कौन कहां है, क्या हो रहा है, कुछ पता नहीं चलता...



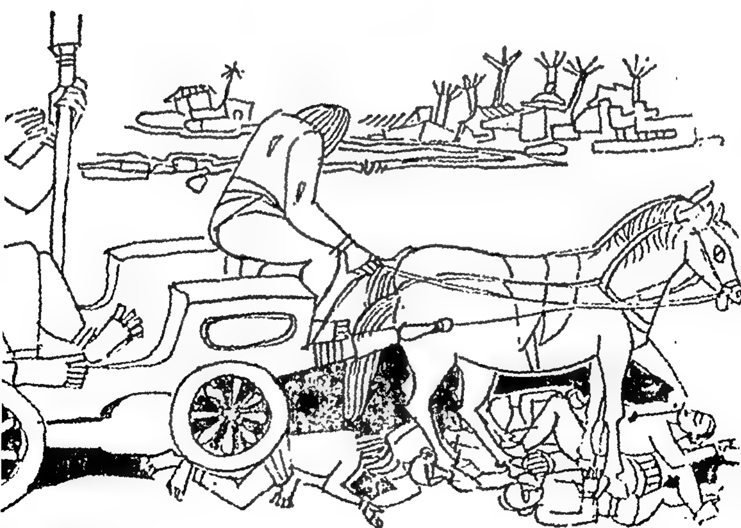
झुण्ड सूंघ-सूंघकर खून चाट रहे थे।

देवलोक की स्थिति देखकर इन्द्र की आंखें भर आईं। उसने गहरी सांस के साथ यों ही पुकारा, "मातलि!"

सारथी मातलि निढाल बैठा था। पुकार सुनकर उसने धीरे से सिर उठाया, साथ ही पीड़ा से सिसिया उठा। आज वह एकाएक सतर्क होकर इन्द्र का अभिवादन नहीं कर सका।

"कोई नहीं दिखाई पड़ता ...शायद कोई नहीं बचा!" इन्द्र का भारी स्वर लड़खड़ा-सा रहा था।

एक शब्द भी बिना बोले मातलि रथ हांकता रहा। रास हिलाकर उसने घोड़ों को संकेत किया। उन्हीं की तरह जैसे दोनों घोड़े भी थक-हारकर शिथिल पड़ गए थे। फिर भी वे संकेत समझ गए। सामने ही दो-तीन देवों और स्त्रियों की खून से लथपथ लाशें पड़ी थीं। उधर से मुंह फेरकर घोड़े





उत्तर-पूर्व की दिशा में चल पड़े। दूर से ही त्वष्टा के बनाए हुए काठ के सुन्दर राजभवन से उठती हुई लपटों और धुएं का बवण्डर-सा दिखाई पड़ा।

इन्द्र की दोनों खाली मुट्ठियां तीव्र आवेश से कस उठीं। वह बुदबुदा उठा, "विनाश ... मातलि, महाविनाश, लगता है, मेरी शची भी गई।"

"इन्द्राणी अमर हो!" मातलि का स्वर कांपा और अचानक एक हिचकी के साथ टूट-सा गया। पर इन्द्र नहीं रोएगा—इन्द्र कभी रोया नहीं करता।

कितनी ही बार लाशों को कुचलते हुए रथ ले जाना पड़ता। उचकने के कारण वे कई जगह गिरते-गिरते बचे। अन्तिम मोड़ पर पहुंचते-पहुंचते अंधेरे में एक परछाईं सामने आ खड़ी हुई। इन्द्र ने सतर्क होकर धनुष-बाण उठाना चाहा, फिर अपनी गदा खोजने लगा। उफ, संग भी नहीं रहा! कुछ भी तो नहीं है।

मातलि ने रथ दूर ही रोक दिया। इन्द्र ने पूछा, "कौन है?"

"मैं हूं, अग्नि।"

"अग्नि !" इन्द्र चिल्ला पड़ा, "अग्नि, तू जीवित है ?"

बड़ी फीकी-सी हंसी सुनाई पड़ी। फटी-फटी-सी आवाज से अग्नि ने उत्तर दिया, "जीवित हूं, पर मरे से अधिक नहीं।"

रथ से उतरकर इन्द्र उसके पास पहुंच गया। अग्नि का सारा शरीर घावों से भरा था। देह पर न कवच था, न कुण्डल थे, न कोई शस्त्र था। उसके कन्धे पर हाथ रखकर इन्द्र फुसफुसाया, "और सब...सब..."

पता नहीं अग्नि हंसा या सिसक उठा। बोला, "कुछ को देखकर आ रहा हूं। दोनों अश्विनीकुमार देवियों की सहायता से घायल योद्धाओं को खोज-खोजकर उधर पूर्व की उस गुफा में भेज रहे है..."

"वहां कौन हैं ?"

"युद्ध प्रारम्भ होते ही बृहस्पति सतर्क हो गया। इन्द्राणी के साथ वृद्धों-स्त्रियों और बालकों को जल्दी से जल्दी जुटाकर वे दूर गुफा की ओर चले गए थे..."

"शची जीवित है ?" इन्द्र उत्साह से चिल्ला पड़ा, पर सहसा उसके चेहरा काला पड़ गया, बोला, "इन्द्राणी जीवित है, फिर भी वह गुफा में जा छिपी ?"

अग्नि ने आदर के साथ कहा, "इन्द्राणी पूजनीय है, राजा, आचार्य बृहस्पति ने बड़ी चेष्टा की, पर वह जा नहीं रही थी। अन्त में बृहस्पति ने उसे तेरी सौगन्ध दे दी। समझाया कि युद्ध में प्राण देना ही सब कुछ नहीं है, आने वाले युग के लिए प्राणों की रक्षा भी उतना ही महान कर्म है। आज यदि इन्द्र न रहे, तो भी वह चाहेगा कि उसकी जाति जीवित रहे। आने वाला इन्द्र जीवित रहे, इसलिए इन्द्राणी, तू मेरे साथ चल।"

"इन्द्राणी अमर है।" मातलि ने फिर से कहा।

इन्द्र सिर झुकाकर जैसे प्रणाम करते हुए बोला, "आचार्य बृहस्पति सचमुच ही पूजनीय हैं। चल अग्नि, हम भी अश्विनी-कुमारों की सहायता करें।"

सारी रात आंखों में ही बीत गई। इन्द्र अकेले ही अपने खून से लथपथ कन्धों पर पचासों घायल देव योद्धाओं को लादकर गुफा तक ले गया। हर बार इन्द्राणी उसके पास आकर मुस्कराती। उसके कन्धे छूती। उसकी आंखों में भरी मीठी-सी चमक देखकर इन्द्र को लगता—वह जरा भी थका नहीं है। इन्द्राणी के छूते ही कसकते हुए घाव जैसे एकाएक अच्छे हो जाते थे।

इन्द्र कहता, "तू इन्हें जीवन दे, शची।" और स्वयं पहाड़ी ढलान पर दौड़ता हुआ श्मशान बने देवलोक की ओर चल पड़ता।

भोर होते-होते छुटकारा मिला। शेष केवल शव रह गए थे। अश्विनीकुमारों ने देवलोक छोड़ने के पहले उन्हें जुटाकर काठ से ढक दिया और आग लगा दी।

एक पेड़ के नीचे चट्टान पर चित पड़ा इन्द्र थकित स्तब्ध दृष्टि से सूने आकाश की ओर देखता रहा। पश्चिम में उठती लपटों के सामने पूर्व में उभरती हुई कुमारी उषा की आभा निस्तेज-सी पड़ गई थी।

"महाविनाश!"

"हूंह, अभी और शेष है?" इन्द्र ने बिना हिले-डुले कहा, "शची, तू क्या सोचती होगी?"

सामने खड़ी होकर शची हंस पड़ी, बोली, "अपने महापराक्रमी इन्द्र के सिवा इन्द्राणी संसार में न कुछ देखती है, न जानती है, न सोचती है।"

इन्द्र ग्लानिभरी हंसी हंस पड़ा, बोला, "पौलोमी, तेरी ुति मुझे व्यंग्य लग रही है। तू, जा, देवों को देख। उन्हें ाण दे, उनकी रक्षा कर।"

इन्द्राणी गई नहीं, चुप खड़ी रही।

"क्यों? क्या हो गया तुझे?"

इन्द्राणी के होंठ कांप उठे। गीली आंखों से इन्द्र की ओर देखती हुई बोली, "बच्चा-बच्चा पानी के लिए तड़प रहा है।"

इन्द्र ने कहा, "त्वष्टा के बनाए हुए जलकुण्डों में पानी भरा होगा। मनु से कह दे, घोड़ों और बैलों पर चमड़ों के थैलों में लाद-लादकर पानी मंगवा देगा। चाहे तो मेरा रथ भी ले जाए।"

इन्द्राणी गई नहीं। दाएं अंगूठे से मिट्टी कुरेदती हुई नीचे देखती खड़ी रही। इन्द्र उठ बैठा, बोला, "'लगता है, अब किसी में चलने-फिरने तक का साहस नहीं रहा। ला, चमड़े के दो थैले उठा ला, अभी तो इन्द्र जीवित है।"

इन्द्राणी ने गीली आंखों से उसे देखते हुए कहा, "वृत्रासुर भयानक है। पता नहीं कब, कितने दिन से वह आक्रमण की तैयारी कर रहा था। फिर त्वष्टा ने उसे सारे भेद भी तो बता दिए होंगे। उसने बांध बनाकर उन स्थानों पर नदी का जल ही रोक दिया है, जहां से नाली लाकर त्वष्टा ने देवलोक जलकुण्ड भरने का प्रबन्ध किया था। अब तो देवलोक के कुण् में पानी की जगह खून भरा है।"

सुनकर इन्द्र पथरा-सा गया। वह आंखें फाड़े शून्य की ओ देखता रहा, देखता रहा...

पर उसी रात मनु और दस्र ने पहाड़ी के बहुत ऊंचे स पर एक छोटा-सा सरोवर ढूंढ़ निकाला। प्यास से तड़पते को शान्ति मिली।

किन्तु दूसरे ही दिन अश्विनीकुमारों ने अनुमान लगाकर बताया कि सरोवर का जल अधिक से अधिक दो मास तक चलेगा। उसके बाद फिर कोई न कोई प्रबन्ध करना ही चाहिए। वर्षा तो अभी चार मास दूर है!"

बृहस्पति ने कहा, "हमें और पूर्व की ओर बढ़कर अपने लिए कोई नया स्थान खोजना होगा।"

शायद और दिन होता तो देवसभा में इस पर घंटों विचार-विमर्श किया जाता। पर आज इन्द्र ने सहसा खड़े होकर कहा, "हमें आज से ही इस प्रयास में लग जाना चाहिए। मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि देवों के लिए नदियों के मार्ग निश्चित कर दूंगा। यदि मैं जीवित रहा तो देवों को कभी पानी के लिए तड़पना नहीं होगा।"

सदा की तरह इस बार भी अग्नि को ही नेता बनाया गया। यज्ञकुण्ड की रक्षा का भार उसी पर रहता था।

ठीक एक मास बाद तांबे और काठ के बने पात्र में आग रखकर, अग्नि शमीदण्ड संभालकर देवों के लिए नए स्थान की खोज में समूह के आगे-आगे चल पड़ा। उसके साथ-साथ कितने ही देव योद्धा थे। इस बीच अश्विनीकुमारों की चिकित्सा और इन्द्राणी की स्नेहभरी सेवा के कारण लगभग सभी घायल ठीक हो चुके थे। नारियों की रक्षा का भार देवि अश्विनी पर था। विश्पला स्त्री सैनिकों का नेतृत्व करती थी।

एक सप्ताह के भीतर ही गुफाएं लगभग खाली कर दी गईं।

इन्द्र सब के बाद में जाने वाला। उसके साथ लगभग पचास देव युवक रुके हुए थे। कुछ वृद्ध ऋषियों और कुछ घायल निर्बल योद्धाओं को ले जाना बाकी था।

सांझ को, सूर्यास्त होते ही इन्द्र के साथ अन्तिम दल भी
की दिशा में चल पड़ा ।

रात बीत गई । सूर्य निकल आया । दोपहर आई । फिर
क और सांझ रात में खो गई । यात्रा चलती रही, चलती
ही...

पथ-प्रदर्शक साथ था । वह थोड़ी ही दूर पर आगे-आगे
चल रहा था । एकाएक चीखकर वह रास्ते से कई पग पीछे
हट आया । इन्द्र तेजी से दौड़कर उसके पास पहुंचा । सामने
ही दो देवों के शव कुचले पड़े थे ।

पथ-प्रदर्शक चिल्ला पड़ा, "पहला पड़ाव यहीं ऋषि दधीचि
के आश्रम में था । ये दोनों यहां रखे भोजन की रक्षा के लिए
नियुक्त थे ! उस दिन दोपहर को इनसे बातें करके मैं गुफाओं
की ओर आया था !"

इसी बीच कई देव युवक आगे चले गए थे । चारों ओर
मृत्यु का सन्नाटा छाया हुआ था। इन्द्र आंखें फाड़-फाड़कर शवों
की ओर देखता रहा। वृहस्पति उसके पास ही आ खड़ा हुआ ।
वह धीरे से फुसफुसाया, "देवों ने चतुरता से काम लिया
है । उन्होंने युद्ध नहीं किया, इस समय रक्षा ही सबसे महान
कर्म था, इन्द्र !"

पास ही खड़े एक मरुत योद्धा ने कहा, "युद्ध करते भी
क्या ! किसी के पास ढंग का एक शस्त्र भी तो नहीं था..."

इन्द्र चुपचाप आगे बढ़ चला ।

ऋषि दधीचि का आश्रम उजड़ गया था । चारों ओ
उपवन के कटे हुए पेड़ और कुचले हुए पौधे इस प्रकार पड़े
कि इन्द्र को महीने भर पहले का, लाशों से भरा हुआ देवल
याद आ गया । उसकी शिराएं तन गईं । वह धीरे-धीरे
रखता आगे बढ़ रहा था ।

सहसा उसका पैर राख के गरम ढेर में पड़ गया, वह उछलकर दूसरी ओर हटा ही था कि उसकी दृष्टि सामने धरती पर झुके किसी व्यक्ति पर पड़ी। पास ही एक झोंपड़ी अब तक जल रही थी। काठ का एक जलता हुआ डंडा खींच कर इन्द्र उधर दौड़ा। पास पहुंचकर कांपती लौ के लाल प्रकाश में उसने देखा, एक धड़ ध्यान की मुद्रा में अब भी जैसे का तैसा बैठा है। देह पर का मांस लगभग चुक गया है। पता नहीं कब पशुओं ने उसे नोच-खा लिया था। कन्धों से लेकर कमर तक केवल कंकाल ही रह गया था। पास ही उसका सिर पड़ा था। दाढ़ी और सिर के सफेद दूधिया बाल खून के गाढ़े रंग में डूबे-से थे।

ऊपर झुका व्यक्ति सीधा हो गया। इन्द्र ने पहचान लिया—मनु ! कांपते हुए लाल प्रकाश में उनकी आंखें मिलीं। इन्द्र बोला नहीं, प्रश्नभरी दृष्टि से देखता रह गया।

"महर्षि दधीचि..." मनु का कण्ठ स्वर सूखा हुआ था। "पूर्व में देवों की यज्ञ-परम्परा को जीवित रखने वाले देवों के मित्र महर्षि...वृत्रासुर ने वध कर दिया ! हमें विवश होकर देवों को साथ लेकर आगे बढ़ जाना पड़ा !"

इन्द्र ने सहसा दधीचि के कंकाल को छूकर कहा, "तेरी शपथ है ऋषि, इन्द्र को तेरी आन है, मैं वृत्रासुर का वध करूंगा !"

"पर उसे काटने वाला कोई भी शस्त्र अब तक नहीं बना है, इन्द्र, सावधान !" आकाशवाणी-सी सुनाई पड़ी। मनु, बृहस्पति और शेष सभी व्यक्ति आश्चर्य से इधर-उधर देखने लगे।

इन्द्र एकाएक उछलकर पास ही के घने झुरमुट के पीछे पहुंचा और घसीटते हुए एक व्यक्ति को सामने लाकर डाल दिया।

बृहस्पति ने चौंककर कहा, "त्वष्टा ! तू ?"

"हां ! मैं ही हूं, आंगिरस ! तू धन्य है ! तूने सब कुछ खोकर भी देवों के प्रति अपना मोह नहीं खोया ! अपने गण के लिए..."

बृहस्पति ने कहा, "पर तू तो प्रतिशोध की आग से जल रहा है..."

"हां, जल रहा था, और आज पश्चाताप की आग से जल रहा हूं !" वह सिर पकड़कर बैठ गया, फिर बोला, "मैंने वृत्र को इसीलिए बनाया था, इसीलिए यज्ञ किया था कि इन्द्र का वध करने वाला उत्पन्न हो। पर वह शक्ति पाकर मद से चूर हो गया है। वह सारे विश्व पर अखण्ड शासन करना चाहता है। सुर ही नहीं, नाग, दैत्य, राक्षस—जो भी सामने पड़ जाए, वृत्र उसी का नाश कर डालता है..."

त्वष्टा जोर से हांफने लगा। बोला, "उसके ताप से धरती जल रही है। मैं यह नहीं सह सकता। उन्मत्त होकर आज मेरे कहने पर भी नहीं माना। उसने महर्षि दधीचि की हत्या की है ! मैं उसका वध करने का यज्ञ करूंगा..."

"तू फिर कोई षड्यन्त्र करना चाहता है, त्वष्टा ?" इन्द्र गरज उठा।

"नहीं। मैं तेरी प्रतिज्ञा पूरी कराना चाहता हूं ! इन्द्र, मुझ पर सन्देह मत कर। मैं सन्देह करने का अवसर ही नहीं दूंगा। तू मेरी बात मान, एक बार फिर उठ और सृष्टि के विद्रोही प्रचण्ड शक्तिशाली वृत्र का वध करके विश्व को मुक्त कर ! करेगा देव ?"

इन्द्र ने गरज कर कहा, "मैं वृत्र का वध करूंगा ! मैं वृत्र का वध करूंगा !! वह अहि है, उसने अपनी कुण्डली में जल बांध रखा है। मैं उसका वध करके जल को मुक्त करूंगा !

जल का मार्ग निश्चित करूंगा।"

त्वष्टा ने प्रणाम करके कहा, "राजा, वृत्र का वध करने के लिए नया शस्त्र चाहिए। आज दो दिन से यहां पड़ा-पड़ा मैं यही उपाय करता रहा हूं। ठहर..."

झाड़ के पीछे जाकर वह एक विचित्र-सा शस्त्र लाया। बोला, "देख, यह क्या है!"

इन्द्र ने उसे लेकर देखा, और चकित रह गया, बोला, "यह क्या है? इसमें से चमक क्यों उठ रही है?"

"यह महर्षि दधीचि की रीढ़ की हड्डी से बना है, इन्द्र! नहीं, डर मत। मैंने इसमें तांबा लगाकर इसे खूब दृढ़ और पैना बना दिया है। यह वज्र है। वृत्र का वध करने वाला एक-मात्र शस्त्र! तेरे अतिरिक्त इसे कोई संभाल नहीं सकता, इन्द्र! इसे तू धारण कर। तू वज्रधर बन और अन्धकाररूपी वृत्र को इस तेजोमय वज्र से मार!"

"विश्वकर्मा, तू धन्य है!" इन्द्र ने उसके कन्धे पर थपकी दी और लपककर वज्र उसके हाथ से ले लिया।

आग की लपटों के लाल प्रकाश में अनेक नोकों वाले वज्र की धारें लपलपा रही थीं—लोहमय वज्र! तेजोमय वज्र!! वैसी ही पैनी धारवाली चमक इन्द्र के विशाल नेत्रों में आ गई।

निकट ही खड़े मनु तथा अन्य योद्धाओं ने सिर झुकाकर स्तुति की :

"महाबली इन्द्र, तूने जिस पराक्रम को प्रकट किया है, उसे जानते हुए भी हम किस प्रकार वर्णन करें!

"तू जो पराक्रम करने जा रहा है, हम उसकी गाथा यज्ञ में गाया करेंगे...

धारें देखते ही असुर आतंकित हो जाएंगे...

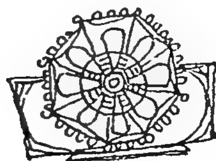
"जो वृत्र सारे जल को घेर कर दम्भ की निद्रा में सो रहा है, उसे तू इस तेजोमय वज्र से पीड़ित कर। हमारे सुख के लिए उसका विनाश कर।"

इन्द्र दाएं हाथ में वज्र उठाए ऋषि दधीचि के शव के निकट गया। बोला, "देवों के मित्र, तू आकाश से देख! मैं वृत्र से प्रतिशोध लूंगा! इस वज्र से उस असुर को फाड़कर जल को मुक्त करूंगा!"

त्वष्टा मनु के पास आ खड़ा हुआ। बोला, "मनु तू मुझे बन्दी बना ले। मुझे वृत्र से भी पुत्र के समान ही स्नेह है। कहीं मोहावेश में मैं फिर कोई अपराध न कर डालूं!"

बृहस्पति ने उसके शरीर पर हाथ फेरते हुए कहा, "तू महान है, विश्वकर्मा! वज्रधारी इन्द्र...महापराक्रमी शत्रु... तुझ पर प्रसन्न हो!"

त्वष्टा दोनों हाथों में मुंह छिपाकर धरती पर बैठ गया... वातावरण में, जलती हुई लकड़ियों के चटकने, जन्तुओं के लड़ने-झगड़ने तथा छीना-झपटी की आवाज गूंजती रही।





१२

देवों की अमरावती पुरी उजाड़ हो गई। नन्दन कानन के सदाबहार फूलों के पेड़-पौधे कुम्हिला गए थे। हर जगह राख के ढेर लगे थे। फूलों की मधुर गन्धभरी बयार की जगह हवा के तीखे झोंके चल रहे थे, जिनमें सड़े हुए मांस की बू समाई थी।

वृत्रासुर ने एक बार फिर पुरी पर धावा मारा था, पर वहां देवों की गन्ध तक न मिली।

अपने बलशाली कन्धे पर विकराल गदा रखकर वृत्र असुरों की सेना के साथ धरती की विजय करने निकल पड़ा था। कहीं, किसी भी जाति के योद्धा उसके सामने नहीं टिक पाए।

त्वष्टा से प्रेरणा पाकर वृत्र ने कितनी ही जातियों की युद्धकला सीखी थी। नागों को पछाड़कर वृत्र ने अपनी शक्ति और भी बढ़ा ली। देव तो उसे ही अहि कहने लगे थे। उन्हें लगता कि वृत्र एक विशाल सर्प की भांति जल के भण्डार

के चारों ओर कुण्डली मारकर बैठा है। उसने देवताओं को मिलने वाले जल को तो रोक ही दिया था, समुद्र पर भी उसके प्रताप के कारण असुर नाविकों की धाक जम गई। उस समय समुद्री मार्गों पर असुरों का ही अधिकार हो गया।

देवों का तो सब कुछ उजड़ ही गया था, राक्षस, दैत्य, पिशाच तथा नाग जातियों को भी वृत्र से टकराने का साहस नहीं होता था। चारों ओर त्राहि-त्राहि मच गई थी। नाग जाति का धीर-गम्भीर नेता विष्णु भी वृत्रासुर की अपार शक्ति तथा उसके अत्याचारों के कारण चिन्ता में पड़ गया।

इन्द्र ने सबसे पहले अपनी गण की रक्षा के उपाय किए। ऊंची-ऊंची पहाड़ियों से घिरी दुर्गम घाटी खोजकर उसने वहीं पूरा देव परिवार बसा दिया। चारों ओर घना जंगल था। यहां तक पहुंचना किसी के लिए भी बहुत कठिन था, फिर भी इन्द्र ने बड़ी सावधानी से काम लिया। उसने घाटी के कोरों पर चट्टानों के ढेर लगवा दिए तथा कुछ युवकों को रक्षा के लिए नियुक्त कर दिया। स्त्रियां भी वहीं रखी गईं। यदि कहीं सहसा शत्रु इस ओर घूम ही पड़े, तो किसी भी प्रकार उसका यहां तक पहुंचना असम्भव हो जाए। उसकी सेना पर चट्टानों की वर्षा करके उसे कुचल दिया जाए।

देवों के पास शस्त्र बहुत कम रह गए थे। जो थे भी, उन्हें इन्द्र अपनी सेना के साथ ले जाना चाहता था। कितने ही देव युवक, हड्डी, काठ तथा पत्थरों को घिस-बांधकर रात-दिन नए तथा अमोघ शस्त्र बनाने में लग गए।

वृत्र के सामने पहुंचकर युद्ध करना ही होगा। और जिस तरह भी सम्भव हो, वृत्र का वध होना ही चाहिए। देव जाति इसी तरह भटकती रही तो एक दिन उसका नाश हो जाएगा। और इन्द्र उनका तड़पना नहीं देख सकता। इससे अच्छा तो

यही होगा कि असुरों के सामने ललकारकर संग्राम करें। या तो वृत्र का वध हो जाए या देवों का ही अस्तित्व समाप्त हो।

"वृत्र का ही वध होगा।" इन्द्र की आंखों से तेज टपकने लगता, "मैं वृत्र को मारकर जल को मुक्त करूंगा।"

उसके अपार बल का ही सहारा रह गया था। सारी देव जाति इन्द्र का बल बढ़ाने का उपाय करने में लगी थी। इन्द्र ही यह कार्य सम्भव कर सकता है। एक मात्र इन्द्र ही जल को मुक्त करेगा, नदियों का मार्ग निर्विघ्न करेगा।

उन्हीं दिनों एक और घटना हुई। नाग जाति के नेता विष्णु ने इन्द्र के लिए एक कवच भेजा...नारायण कवच। साथ ही सन्देश भी—अवसर पड़ने पर नाग योद्धा भी इन्द्र का साथ देंगे। नाग दूत ने कहा, "भगवान विष्णु ने सुरनायक इन्द्र को प्रणाम कहा है और निवेदन किया है कि महाबली शक्र सदा मुझे अपना छोटा भाई और दाईं भुजा समझें।"

प्रसन्न होकर इन्द्र बोला, "भगवान विष्णु को मेरा अभिनन्दन कहो। मैं सदा उन्हें उपेन्द्र ही समझूंगा।"

देवलोक में उस रात विचित्र-सा समारोह हुआ। विष्णु नागों का नेता होने के साथ ही और भी जातियों का हृदय जीत चुका था। गरुड़ और नाग लोगों में भयंकर शत्रुता थी, विष्णु के प्रयास से उन दोनों की सन्धि हो गई थी। विष्णु अपार शक्ति तथा उदार और शांत चित्त, दोनों का ही धनी था। उसे विनाश से अधिक मोह निर्माण में था। इसी कारण शत्रु को भी मित्र बना लेने की चेष्टा वह सबसे पहले करता था। नागों और देवों के बीच पहली बार ऐसा सम्बन्ध हो रहा था। विष्णु की शक्ति उस समय कौन नहीं जानता था! स्वयं इन्द्र भी उनकी धाक मानता था और नागों तथा देवों के संघर्ष बचाता रहता था। एक साथ दो बलवान

चारों ओर कुण्डली मारकर बैठा है। उसने देवताओं को मिलने वाले जल को तो रोक ही दिया था, समुद्र पर भी उसके प्रताप के कारण असुर नाविकों की धाक जम गई। उस समय समुद्री मार्गों पर असुरों का ही अधिकार हो गया।

देवों का तो सब कुछ उजड़ ही गया था, राक्षस, दैत्य, पिशाच तथा नाग जातियों को भी वृत्र से टकराने का साहस नहीं होता था। चारों ओर त्राहि-त्राहि मच गई थी। नाग जाति का धीर-गम्भीर नेता विष्णु भी वृत्रासुर की अपार शक्ति तथा उसके अत्याचारों के कारण चिन्ता में पड़ गया।

इन्द्र ने सबसे पहले अपनी गण की रक्षा के उपाय किए। ऊंची-ऊंची पहाड़ियों से घिरी दुर्गम घाटी खोजकर उसने वहीं पूरा देव परिवार बसा दिया। चारों ओर घना जंगल था। यहां तक पहुंचना किसी के लिए भी बहुत कठिन था, फिर भी इन्द्र ने बड़ी सावधानी से काम लिया। उसने घाटी के कोरों पर चट्टानों के ढेर लगवा दिए तथा कुछ युवकों को रक्षा के लिए नियुक्त कर दिया। स्त्रियां भी वहीं रखी गईं। यदि कहीं सहसा शत्रु इस ओर घूम ही पड़े, तो किसी भी प्रकार उसका यहां तक पहुंचना असम्भव हो जाए। उसकी सेना पर चट्टानों की वर्षा करके उसे कुचल दिया जाए।

देवों के पास शस्त्र बहुत कम रह गए थे। जो थे भी, उन्हें इन्द्र अपनी सेना के साथ ले जाना चाहता था। कितने ही देव युवक, हड्डी, काठ तथा पत्थरों को घिस-बांधकर रात-दिन नए तथा अमोघ शस्त्र बनाने में लग गए।

वृत्र के सामने पहुंचकर युद्ध करना ही होगा। और जिस तरह भी सम्भव हो, वृत्र का वध होना ही चाहिए। देव जाति इसी तरह भटकती रही तो एक दिन उसका नाश हो जाएगा और इन्द्र उनका तड़पना नहीं देख सकता। इससे अच्छा

यही होगा कि असुरों के सामने ललकारकर संग्राम करे। या तो वृत्र का वध हो जाए या देवों का ही अस्तित्व समाप्त हो।

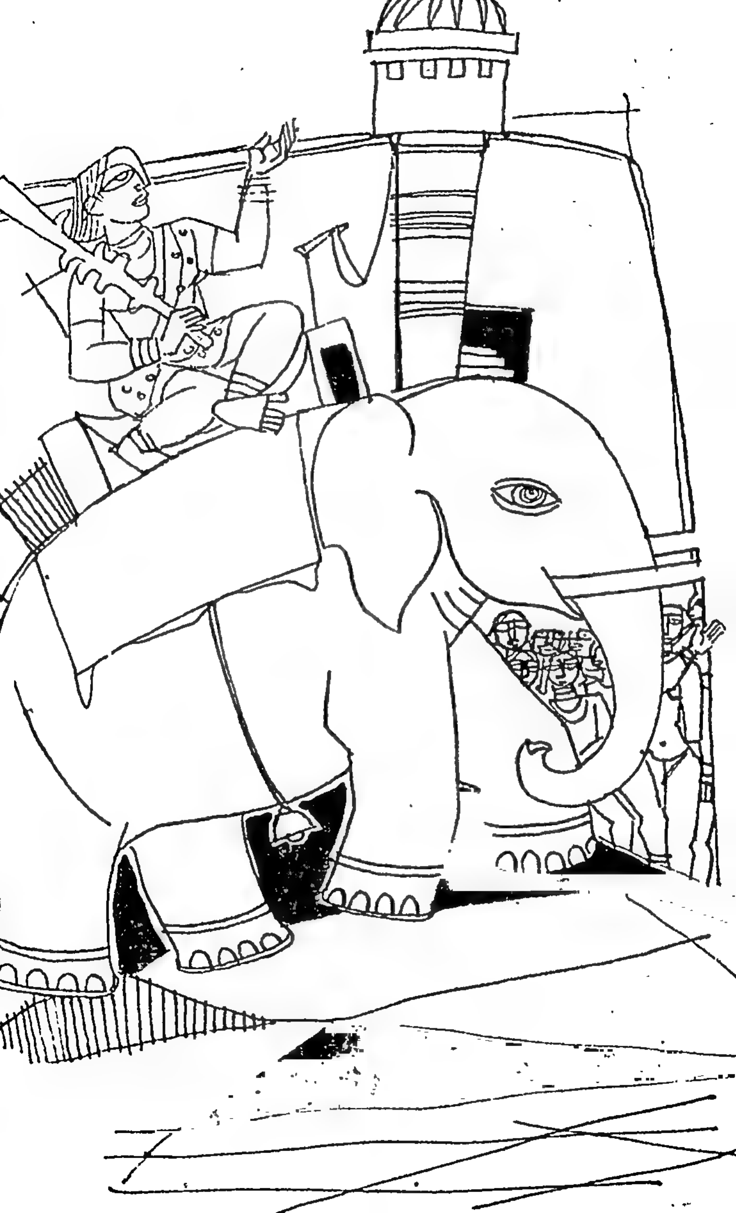
"वृत्र का ही वध होगा।" इन्द्र की आंखों से तेज टपकने लगता, "मैं वृत्र को मारकर जल को मुक्त करूंगा।"

उसके अपार बल का ही सहारा रह गया था। सारी देव जाति इन्द्र का बल बढ़ाने का उपाय करने में लगी थी। इन्द्र ही यह कार्य सम्भव कर सकता है। एक मात्र इन्द्र ही जल को मुक्त करेगा, नदियों का मार्ग निश्चित करेगा।

उन्हीं दिनों एक और घटना हुई। नाग जाति के नेता विष्णु ने इन्द्र के लिए एक कवच भेजा...नारायण कवच। साथ ही सन्देश भी—अवसर पड़ने पर नाग योद्धा भी इन्द्र का साथ देंगे। नाग दूत ने कहा, "भगवान विष्णु ने सुरनायक इन्द्र को प्रणाम कहा है और निवेदन किया है कि महाबली शक्र सदा मुझे अपना छोटा भाई और दाईं भुजा समझें।"

प्रसन्न होकर इन्द्र बोला, "भगवान विष्णु को मेरा अभिनन्दन कहो। मैं सदा उन्हें उपेन्द्र ही समझूंगा।"

देवलोक में उस रात विचित्र-सा समारोह हुआ। विष्णु नागों का नेता होने के साथ ही और भी जातियों का हृदय जीत चुका था। गरुड़ और नाग लोगों में भयंकर शत्रुता थी, विष्णु के प्रयास से उन दोनों की सन्धि हो गई थी। विष्णु अपार शक्ति तथा उदार और शांत चित्त, दोनों का ही धनी था। उसे विनाश से अधिक मोह निर्माण में था। इसी कारण शत्रु को भी मित्र बना लेने की चेष्टा वह सबसे पहले करता था। नागों और देवों के बीच पहली बार ऐसा सम्बन्ध हो रहा था। विष्णु की शक्ति उस समय कौन नहीं जानता था! स्वयं इन्द्र भी उसकी धाक मानता था और नागों तथा देवों के संघर्ष बचाता रहता था। एक साथ दो बलवान शत्रुओं से



लड़ने का अर्थ था, देवों का नाश।

पर उसने यह नहीं सोचा था कि शक्तिशाली विष्णु एक दिन स्वयं इतनी नम्रता के साथ उसका मित्र बनना चाहेगा। उसने अपने को इन्द्र का छोटा भाई कहकर इन्द्र का मन जीत लिया था। एक नाग दूत के साथ कई देव-योद्धा इन्द्र का सन्देश लेकर विष्णु के पास दौड़ा दिए गए थे। इन्द्र ने उपेन्द्र को नए नन्दन कानन के सदाबहार पुष्पों से गुंथी हुई वैजयन्ती माला उपहार में भेजी थी। स्वयं शची ने वह माला अपने हाथों से बनाई। इन्द्र ने विष्णु से सहायता भी मांगी थी। देव योद्धा भी आज ही चल पड़ेंगे। उधर से जितने भी योद्धा हो सकें, बढ़कर पुरानी उजाड़ अमरावती के पास देवों से मिल जाएं। संग्राम करना होगा—कई ग्रामों के योद्धा वृत्र से लड़ेंगे।

नारायण कवच को काट पाना किसी साधारण शस्त्र के वश की बात नहीं थी। इन्द्र उसे धारण करके अद्भुत तेजस्वी दीखने लगा। उसका आत्मविश्वास सौ गुना हो गया।

आज का उत्सव समाप्त होते ही इन्द्र देवों की सेना लेकर वृत्र से युद्ध करने के लिए निकल पड़ेगा। एक ओर शत्रु का अन्त होने की आशा से देवों की आंखों में चमक थी और दूसरी ओर भयंकर संकटों की कल्पना करके आंसू भर आते थे।

इन्द्र अपने विशालकाय गजराज पर चढ़ा [illegible] आ खड़ी हुई। उसने प्रणाम करके कहा, "मैं [illegible] प्रतीक्षा करती रहूंगी।"

इन्द्र का हृदय भर आया, पर गर्व से सिर उठाकर वह बोला, "और मैं विजय करके लौटूंगा तो [illegible] फिर से इन्द्रासन लाऊंगा।"

साथ ही गजराज उठ खड़ा हुआ। [illegible] बज उठे। देवों की भुजाएं फड़कने लगीं

एक ओर खड़ा त्वष्टा रीती आंखों से इन्द्र को जाते देख रहा था। सहसा हाथ उठाकर वह चिल्ला पड़ा, "तेरी जय हो, इन्द्र ! तेरी जय हो !"

पास ही खड़े वृहस्पति ने उसे अपनी वांहों में संभाल लिया।

चारों ओर से उमड़ती-घुमड़ती घटा के समान उस दिन अचानक ही देवों की विशाल सेना ने असुरों को घेर लिया—ठीक उसी प्रकार, जैसे एक दिन सहसा ही वृत्र अमरावती पर टूट पड़ा था।

रात-दिन की चिन्ता छोड़कर घोर संग्राम छिड़ गया। इस वार असुरों और देवों की भयानक टकराहट से धरती कांप उठी। कौन जीतेगा, कुछ पता नहीं।

अग्नि, मनु, अश्विनीकुमार दस्र-नासत्य, मरुत तथा कितने ही देव अलग-अलग टुकड़ियां बनाकर असुरों पर टूट पड़े। दूसरी ओर से विष्णु की आज्ञा से नाग सेनापति नहुष भी अपने नाग योद्धाओं के साथ झपट पड़ा। असुरों की सेना को विना किसी योजना के कई भागों में वंट जाना पड़ा था। हानि उन्हें ही अधिक उठानी पड़ रही थी। संभलना कठिन हो गया।

देवों और नागों ने उन्हें एक क्षण का भी अवसर नहीं दिया। असुर जैसे ही कहीं व्यूह बनाने लगते, उन पर कोई न कोई टूट पड़ता।

वृत्र भी ठीक-ठीक संभल नहीं पा रहा था। आक्रमण पर आक्रमण। उसे कल्पना तक न थी कि वह जिन देवों को जड़-मूल से नष्ट समझ रहा था, वे धरती फाड़कर यहां प्रकट हो जाएंगे और ऐसा भयानक युद्ध करेंगे। फिर भी वह धीरज के साथ अड़ा रहा। उसने चरों को भेजकर असुरों की नई सेना

भी मंगवा ली थी, और आज्ञा दी थी कि वह बांध के उस ओर ओट में खड़ी होकर पहले व्यूह बना ले, फिर चारों ओर से शत्रुओं को घेर ले।

असुरों की नई सेना के आने की सूचना पाकर इन्द्र चिन्तित हो गया। यदि शत्रु को जरा भी समय मिल गया तो उन्हें कभी हराया नहीं जा सकेगा। उसने निश्चय किया बस, यही क्षण है, आज और अभी!

अग्नि, मरुत तथा अश्विनीकुमारों को आवश्यक सन्देश भेजकर वह अपनी सेना के साथ घूमकर सीधे बांध की ओर बढ़ चला। चुपचाप वे ऊपर चढ़ गए। फिर अचानक ही उनके शंख गरज उठे। देवों की कई टुकड़ियां अलग-अलग जगहों पर जमकर लड़ रही थीं, शंखों की ध्वनि सुनते ही वे अचानक घोड़ों को मोड़कर भाग निकलीं। साथ ही वे चिल्लाने लगीं "वृत्र हमारा मित्र है...वृत्र की जय हो।

असुर योद्धा कुछ देर तक भौंचक्के-से खड़े रहे। यह क्या हो गया? फिर वे प्रसन्न होकर चिल्लाने लगे। देव आज फिर पराजित होकर भाग रहे हैं! उन्हें सन्धि करनी ही पड़ी! महाबली असुर के चरणों पर सुरपति इन्द्र को सिर झुकाना ही पड़ा!

थोड़ी देर तक केवल कोलाहल होता रहा फिर शान्ति छा गई। असुरों को चैन मिला। वे विश्राम की तैयारी करने लगे।

ठीक उसी समय नदी के बांध के उस ओर शंख बज उठे। शंखों की गरज से कान फटने लगे। असुर चौंक उठे। देवों ने धोखा दिया! यहां मैदान छोड़कर उन्होंने नया मोर्चा बना लिया। इस बार इधर नहीं बांध के उस पार सारी सेना को उन्होंने चारों ओर से घेर लिया था। वहीं महाबली वृत्र भी है! और सन्धि? शंखों के गर्जन तथा हाहाकार में

सव कुछ खो गया।

जल्दी-जल्दी तैयार होकर असुर उस ओर मुड़े। इधर से वांध पार करके उस ओर पहुंचते उन्हें देर नहीं लगेगी। वे दल वनाकर ऊपर चढ़ने लगे। अभी आधी ही चढ़ाई पार की थी कि ऊपर से वाणों की वौछार हुई। कितने ही असुर लुढ़क गए। नीचे पहुंचते-पहुंचते उनके शरीर मांस के लोथड़ों के रूप में विखर गए। पीछे खड़े असुर नीचे से ही वाण चलाने लगे, पर ऊपर से देवों के वाणों तथा पथरीले शस्त्रों की हर वौछार सौ-सौ असुरों को ले लेती। पीछे से नाग योद्धा पराक्रमी नहुष उन्हें कुचलने लगा। उसके कारण फिर एक भी असुर वांध पर नहीं चढ़ने पाया।

दूसरी ओर से वृत्र ने देखा कि वह सेना सहित घिर गया है। देवों की युद्धकला पर उसे अचरज हुआ। पर एक ही चारा था, युद्ध! वह इस समय असुर स्त्रियों की सेना के पास खड़ा व्यूह वनवा रहा था। आक्रमण की सूचना पाते ही वह दूसरी ओर जाने को मुड़ा, पर ऊपर से इन्द्र का शंख गरज उठा।

वृत्र चौंककर उधर देखने लगा। विश्वास नहीं हो रहा था। पूरे वांध पर देव योद्धा लम्बे-लम्बे धनुषों पर वाण चढ़ाए खड़े थे। उसने हुमककर अपनी प्रचण्ड गदा उठा ली।

"इधर आ वृत्र, इस ओर! मैं सुरनायक इन्द्र, तुझे युद्ध करने के लिए वुला रहा हूं!"

वृत्र ने ध्यान से उसे देखा, फिर ठहाका मारकर हंसा। वोला, "आज आया है! अव तक कायर की तरह लुकता-छिपता रहा। तेरा वध करूंगा। पिता त्वष्टा ने इसीलिए मुझे वनाया है!"

वह घूमकर कवच तथा ढाल की आड़ लेकर ऊपर चढ़ने लगा। देवों के वाण इस ओर भी तीखी वौछार की तरह पड़ने

लगे, पर अकेला वृत्र विशाल शिलाखण्ड की तरह बिना रुके ऊपर चढ़ा जा रहा था।

असुर स्त्रियों की सेना का नेतृत्व वृत्र की माता दनायु कर रही थी। उसने ललकारकर आज्ञा दी, "वृत्र अकेला जा रहा है, चलो!"

देवों के बाणों से आत्मरक्षा करती हुई असुर स्त्रियों की सेना वृत्र के पीछे-पीछे ऊपर चढ़ आई और बाध पर भयानक संग्राम छिड़ गया।

वृत्र अपनी विशाल गदा संभालकर इन्द्र पर टूट पड़ा। इन्द्र अपनी गदा पर उसके आघात रोकने लगा। वृत्र का एक-एक आघात झेल पाना कठिन था। वह उन्मत्त होकर इतने वेग से वार कर रहा था कि इन्द्र को अपनी रक्षा में ही अपना सारा युद्ध-कौशल लगाना पड़ रहा था। आघात करने का उसे कोई अवसर ही नहीं मिला।

देव योद्धा वृत्र पर बाणों की बौछार कर रहे थे, पर उसका शरीर तो जैसे सचमुच वज्र का बना हो। वह बिना चिन्ता किए इन्द्र को गदा पर गदा मारता जा रहा था। सहसा इन्द्र ने अवसर पाकर एक आघात उसकी ठुड्डी पर किया। पीड़ा से वृत्र चीखा, और उसने झपट कर इतने वेग से गदा मारी कि इन्द्र की गदा छूटकर नीचे जा पड़ी।

वृत्र ठहाका मारकर हंसा और गदा तानकर झपटते हुए चिल्लाया, "ले इन्द्र! तेरा वध हुआ!"

पर दूसरे ही क्षण चमत्कार-सा हुआ। इन्द्र को कोई शस्त्र हाथ में लेने का अवसर नहीं मिला था। वह घूमकर गदा का वार बचा गया। वृत्र झटके के कारण लड़खड़ाकर घुटनों के बल धरती पर गिरा, तभी इन्द्र ने उसे पीछे से दबोच लिया, पर इस चपेट में इन्द्र की कटि में खोंसा हुआ वज्र सहसा छिटक

कर नीचे गिर पड़ा। इन्द्र स्वयं भी यह घटना देख नहीं सका था। उसने वृत्र को जकड़कर सिर के उपर उठाया और चट्टान पर पटक दिया। पर वृत्र को जैसे कोई आघात लगता ही न था। वह छलांग लगाकर फिर से इन्द्र पर टूट पड़ा।

नीचे से असुरों की सेना को चीरकर नासत्य और मनु भी अब तक इस ओर पहुंच गए थे। उन्होंने वृत्र की गदा तनी देखी थी और इन्द्र को निहत्था देखा था। उनकी सांस ऊपर की ऊपर रह गई...पर इन्द्र मरा नहीं...वह वृत्र को दबोचकर उसे पटकने की चेष्टा कर रहा था। वृत्र की गदा भी छूट गई थी। दोनों एक-दूसरे से गुंथ गए थे। वे एक-दूसरे को पछाड़ते तो लगता कि पत्थर का विशाल बांध कांप रहा है। इस ओर असुरों का मर्दन करके खड़ा नहुष विस्मय के साथ इन्द्र और वृत्र का युद्ध देख रहा था।

वृत्र के घूंसों का आघात भी गदा के आघात से कम नहीं था। इन्द्र का शरीर शिथिल पड़ गया। उसे लगा कि वृत्र के साथ इस युद्ध में वह फिर उठ नहीं पाएगा। पर वृत्र की शक्ति भी धीरे-धीरे टूट रही है।

सहसा वृत्र ने इन्द्र को उठा लिया। देव योद्धाओं के प्राण सूख गए। उन्हें लगा कि दूसरे ही क्षण नीचे की चट्टानी धरती पर इन्द्र के मांस के लोथड़े बिखर पड़ेंगे, पर इन्द्र ने तुरन्त ही उलटकर दोनों पांवों को वृत्र के गले में फंसा लिया। क्रोध से कांपकर वृत्र ने उसके सारे शरीर को मरोड़ डाला और अपनी दोनों भुजाओं में बांध लिया। वृत्र की भुजाओं में जकड़ा इन्द्र उलटा लटका हुआ था। उसके दोनों पांव वृत्र की गरदन पर कसे हुए थे, पर स्वयं उसका शरीर वृत्र की कठोर जकड़न में फंसकर रह गया था। भयानक ऐंठन के कारण उसका शरीर टूटने लगा। बस, कुछ ही क्षणों में उसकी हड्डियां कड़कड़ाकर

चूर-चूर हो जाएंगी...सहसा उसने देखा, सामने ही धरती पर वज्र पड़ा है। पीड़ा से तड़पकर इन्द्र ने हाथ बढ़ाया। उफ! दूसरे ही क्षण वज्र उसके हाथों में था! और एक ही आघात में इन्द्र ने वृत्र की कोख फाड़ दी।

वृत्र किसी मरते हुए हाथी की तरह चिंघाड़ उठा, फिर उसकी भुजाएं ढीली पड़ गईं। इन्द्र तुरन्त छूट निकला। उसके पांव की ठोकर लगते ही वृत्र जड़ से उखड़े हुए पेड़ की तरह लुढ़ककर बांध के नीचे समुद्र की तरह लहराते पानी में जा पड़ा।

विजय के कारण इन्द्र का शरीर जैसे नई शक्ति से भर उठा। उसकी आंखें दहकने लगीं।

अचानक वह गिरते-गिरते बचा। वृत्र की माता दनायु ने झपटकर उसकी बाईं भुजा पर गदा मारी थी। पर इन्द्र के प्रताप को अब कौन खण्डित कर सकता है! एक ही आघात में दनायु की हड्डियों को तोड़कर इन्द्र ने उसे भी ठीक वहीं फेंक दिया, जहां वृत्र गिरा था।

पता नहीं कितनी देर तक इन्द्र की जयजयकार से धरती कांपती रही...

"वज्रबाहो इन्द्र महान है! इन्द्र के योग्य स्तुति हम नहीं जानते...

"द्युलोक के पुत्र इन्द्र, शत्रुवध के समय कोई तेरा तेज नहीं सह सकता। तू हमारी पुकार सुन...

"तू प्रसन्न होकर सोमरस पान कर!

"हम तेरा अनुगमन करते हैं...

"तू हमारा कल्याण कर। तेजोमय वज्र से तूने असुर वृत्र की कोख फाड़ दी! अब जल को मुक्त कर...